सह्याद्रि की चट्टानें

[ऐतिहासिक उपन्यास]

आचार्य चतुरसेन

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-६

सह्याद्रि की चट्टानें

सह्याद्रि की चट्टानें

१

पहली भेंट

रात बहुत अधेरी थी। रास्ता पहाडी और ऊबड-खाबड था। आकाश पर बदली छाई हुई थी, और अभी कुछ देर पूर्व जोर की वर्षा हो चुकी थी। जब जोर की हवा से वृक्ष और बडी-बडी घास साय-साय करती थी, तब जगल का सन्नाटा और भी भयानक मालूम होता था।

इस समय उस जगल मे दो घुडसवार बढे चले जा रहे थे। दोनो के घोडे खूब मज़बूत थे, पर वे पसीने मे लथपथ थे। घोडे पग-पग पर ठोकरें खाते थे, पर उन्हे ऐसे बीहड रास्तो मे, ऐसे सकट के समय अपने स्वामी को ले जाने का अभ्यास था। सवार भी असाधारण धैर्यवान और वीर पुरुष थे। वे चुपचाप चल रहे थे। घोडो की टापो और उनकी प्रगति से कमर मे लटकती हुई उनकी तलवारो और बर्छों की खडखडाहट उस सन्नाटे के आलम मे एक भयपूर्ण रव उत्पन्न कर रही थी।

हठात् घोडे ने एक ठोकर खाई, और एक मद आर्तनाद अग्रगामी सवार के कान मे पडा। उसने घोडे की बाग खीचते हुए कहा—"धोंधूजी!"

"महाराज!"

पीछे आने वाला सवार क्षण-भर मे अग्रगामी सवार के सन्निकट आ गया, और उसने बिजली की भाति अपनी तलवार खीच ली।

अग्रगामी सवार का घोड़ा खड़ा हो गया था। उसने भी तलवार नंगी करके कहा "देखो, क्या है? घोड़े ने ठोकर खाई है, यह आर्तनाद कैसा है?"

धाधूजी घोड़े से उतर पड़े, उन्होंने झुककर देखा और कहा-"महाराज, एक मनुष्य है।"

"क्या घायल है?"

"खून में लथपथ प्रतीत होता है।"

"जीवित है?"

इसी समय पड़े हुए व्यक्ति ने फिर आर्तनाद किया। महाराज उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही घोड़े से कूद पड़े। उन्होंने धाधूजी को प्रकाश करने का आदेश दिया, और स्वयं मार्ग में पड़े व्यक्ति के सिरहाने घुटनों के बल बैठ गए। उन्होंने उसका सिर गोद में रख लिया, नाड़ी देखी, हृदय का स्पंदन देखा, और कहा—"जीवित है। पर मालूम होता है, बहुत घाव खाए हैं, रक्त बहुत निकल गया है।"

धाधूजी ने तब तक चकमक पत्थर से अबरख की बनी चोर-लालटेन जला ली थी। वह उसे घायल के मुख के पास लाए। देखकर कहा—"अरे, बड़ा अल्पवयस्क बालक है!"

"परन्तु अंग-अंग में घाव है, मालूम होता है, वीरतापूर्वक युद्ध किया है।"

मुमूर्षु ने प्रकाश और मनुष्य-मूर्ति को देखा, और जल का संकेत किया। महाराज ने स्वयं उसके मुंह में जल डाला। जल पीकर उसने आंखें खोलीं, और क्षीण स्वर में कहा—"आप कौन हैं प्राण-रक्षक?" और फिर कुछ ठहरकर कहा—"आप चाहे जो भी हों, यह प्राण और शरीर आपके हुए।" उसके होंठों पर मंद हास्य की रेखा आई।

महाराज ने कहा—"धाधूजी, इसका रक्त बंद होना चाहिए। देखिए, सिर से अब तक रक्त बह रहा है। और, पार्श्व का यह

घाव भी भयानक है।" इसके बाद दोनो व्यक्तियो ने उसके सभी घाव बाधकर उसे स्वस्थ किया। फिर वे सलाह करने लगे—"अब इसे कहा ले जाया जाए ? समय कम है और हमारा गतव्य पथ लम्बा।"

युवक ने स्वय कहा—"यदि मुझे घोडे पर बैठा दिया जाए, तो मै मजे मे चल सकूगा।"

"क्या निकट कोई गाव है ?"

"है, पर एक कोस के लगभग है।"

"वहा कोई मित्र है ?"

"है। वहा मेरी बहन का घर था, बहनोई है।" युवक का स्वर कपित था।

महाराज ने कहा—"बहिन नही है ?"

"नही।" युवक का कठ अवरुद्ध हुआ। उसके नेत्रो से झर-झर आसू बहने लगे। वह फिर बोला—"उसे आज तीसरे पहर विदा कराके घर ले आ रहा था। बहनोई उस बाग तक साथ आए थे। उन्हे लौटते देर न हुई, ज्यो ही हम लोग इस खेडे के निकट पहुँचे, कोई पाच सौ यवन सैनिको ने धावा बोल दिया। मेरे साथ केवल आठ आदमी थे। शायद सभी मारे गए। मैंने यथासाध्य विरोध किया, पर कुछ न कर सका, वे बहन का डोला ले गए। मैंने मूच्छित होने से पूर्व अच्छी तरह देखा, पर मैं तलवार पकड ही न सका, फिर मेरी तलवार टूट भी गई थी।" युवक उद्वेग से मानो मूर्छित हो गया। महाराज ने होठ चबाया। एक बार उन्होने अपने सिह के समान नेत्रो से उस चोर-लालटेन के प्रकाश मे चारो ओर देखा—टूटी तलवार, वर्छा, दो-चार लाशे और रक्त की धार।

उन्होने युवक से कहा—"तुम्हारे घर पर कौन है ?"

"वृद्धा विधवा माता।"

"गाव कौन है ?"

"मौरावा।"

"दूर है ?"

"आठ कोस होगा।"

"तुम्हारा नाम ?"

"तानाजी।"

"घोडे पर चढ सकोगे ?"

"जी।"

महाराज और धाधूजी ने युवक को घोडे पर लादा। धाधूजी उसके पीछे बैठे, और महाराज भी अपने घोडे पर सवार हुए।

इस बार ये यात्री अपना पथ छोडकर युवक के आदेशानुसार गाव की ओर बढे, पगडडी सकरी और बहुत खराब थी। जगह-जगह पानी भरा था, पर जानवर सधे हुए और बहुत असील थे। धीरे-धीरे गाव निकट आ गया। युवक के बताए मकान के द्वार पर जाकर धाधूजी ने थपकी दी। एक युवक ने आकर द्वार खोला। धाधूजी ने उसकी सहायता से तानाजी को उतारकर घर मे पहुचाया। सक्षेप मे दुर्घटना का हाल सुनकर गृहपति युवक मर्माहत हुआ। धाधूजी ने अवकाश न देखकर कहा—"तुम लोग परसो इसी समय हमारी यहा आने की प्रतीक्षा करना और घटना का कही भी जिक्र न करना।"

तानाजी ने व्यग्र होकर कहा—"महोदय, आपका परिचय ? मैं किसके प्रति कृतज्ञ होऊ ?"

"छत्रपति हिन्दू-कुल-सूर्य महाराजाधिराज शिवाजी के प्रति।" धाधूजी ने अब विलम्ब न किया, वह लपककर घोडे पर चढे, और दोनो असाधारण सवार उस अधकार मे विलीन हो गए।

२

महाराष्ट्र भूमि और मराठे

महाराष्ट्र भूमि तीन भौगोलिक भागो मे विभक्त है। पश्चिमी घाट और हिन्द महासागर के बीच एक लम्बी किन्तु सकरी जमीन का हिस्सा बहुत लम्बा चला गया है। इसकी चौडाई कही ज्यादा, कही कम है। बम्बई और गोआ के बीच का प्रदेश कोकरण कहाता है। गोआ के दक्षिण मे कन्नड प्रदेश है। कोकरण मे प्रति वर्ष १०० से २०० इच तक वर्षा होती है। यहा की मुख्य उपज चावल है। आम, केले और नारियल के बाग यहा बहुत है। घाट पार करने पर पूर्व की ओर लगभग २० मील चौडा धरती का एक लम्बा टुकडा पडता है—इसे मावल कहते हैं। यहा की धरती बहुत ही ऊँची-नीची है, दूर तक टेढी-मेढी घाटियो मे जहा-तहा समतल भूमि पाई जाती है। इसके आगे पूर्व की ओर बढने पर पश्चिमी घाट की पहाडियो की ऊचाई कम होने लगती है। और नदियो के कछार चौडे और समतल होने लगते है। यही से वह प्रदेश शुरू होता है जिसे खानदेश कहते है। यह दक्षिण के मध्य मे स्थित दूर तक फैला हुआ एक विस्तृत उपजाऊ मैदान है। यहा की मिट्टी काली है।

प्रकृति ने इस प्रान्त को ऐसा रूप दिया है कि विलासिता और कला वहा नही पनप सकती। परन्तु इन अभावो की पूर्ति वहा की जल-वायु के कारण वहा के निवासियो मे आत्मविश्वास, साहस, अध्यवसाय, सादगी और सहिष्णुता के रूप मे मिलती है। आत्मसम्मान और सामाजिक समता यहा की आधारभूत विशेषताएँ है। १५वी-१६वी शताब्दी के लोकप्रिय सन्तो ने यहा जन्म की श्रेष्ठता की अपेक्षा चरित्र की पवित्रता को अधिक महत्त्व दिया, और यही कारण था कि शिवाजी को १७वी शताब्दी मे महाराष्ट्रियो की राजनैतिक एकता स्थापित करने मे विशेष

कठिनाई नही हुई । क्योकि उनसे पहले ही महाराष्ट्र । समान भाषा, समान धर्म और समान जीवन के आधार पर एक सुगठित जाति का निर्माण हो चुका था । शिवाजी की सेना मे मराठा और कुनबी जाति के लोगो की अधिकता थी । ये जातिया निष्कपट, स्वावलम्बी, परिश्रमी और वीर थी ।

३
शाहजी भोसले

चौदहवी शताब्दी मे जब मुसलमानो ने दक्षिण को जीता और महाराष्ट्र के अन्तिम हिन्दू राज्य का भी अन्त हो गया, तब यहा की योद्धा जातियो के छोटे-छोटे दल भिन्न नायको के दल मे सगठित हो गए, जिन्हे नये मुसलमान शासक धन देकर अपनी सहायता के लिए बुलाते रहे, और उनका सहयोग लेते रहे । इस तरह मुसलमानी राज्यो के सहयोग से कुछ मराठा घराने धन और शक्ति से सम्पन्न बन गए । ऐसा ही एक घराना भोसले का था जो पूना प्रान्त के अन्तर्गत पाटस ताल्लुके मे रहता था और वहा के दो गाँवो की पटेली भी करता था । आरम्भ मे यह घराना खेती करके निर्वाह करता रहा । इसी घराने मे एक पुरुष हुए, जिनका नाम मल्लूजी था । वे देशल ग्राम मे रहते थे । परन्तु उनका विवाह एक ऐसे प्रतिष्ठित वश मे हुआ था जो धनवान भी था और प्राचीन भी । इस समय निजामशाही मे सबसे प्रमुख मराठा घराना सामन्त लक्खूजी जादोराय का था । जादोराय निजामशाही मे १० हजार के जागीरदार थे । उनके वश मे सदा से देशमुखी चली आती थी । मल्लूजी की ससुराल वालो का घराना दूसरे नम्बर पर था । परन्तु मल्लूजी का साला अपने समय का बडा नामी लडाका और वीर था । उसका नाम जयपाल था । वह सदा लडाइया तथा लूटमार करता रहता था ।

मल्लूजी भोसले का बडा पुत्र शाहजी था। शाहजी का ब्याह जादोराय की कन्या जीजाबाई से हुआ। जादोराय और मल्लूजी पुराने मित्र थे। एक बार वे अपने पुत्र शाहजी को सग लेकर जादोराय के घर गए। तब बालिका जीजाबाई आकर शाहजी के पास बैठ गई। जादोराय ने हसकर कहा—"अच्छी जोडी है"। उसने लडकी से पूछा—"क्या तू शाहजी से ब्याह करेगी?" यह सुनते ही मल्लूजी उछलकर खडा हो गया और कहा—"देखो भई, सबके सामने जादोराय ने आज अपनी कन्या का वाग्दान मेरे पुत्र शाहजी के साथ कर दिया है। अब जीजाबाई शाहजी की हुई।" परन्तु जादोराय बिगड गया, और इसी बात पर दोनो मे अनबन भी हो गई। बाद मे मल्लूजी को खेतो मे गडा हुआ कुछ धन प्राप्त हो गया, जिससे उन्होने कुछ घोडे और हथियार खरीद लिए और निजामशाही की एक सेना के सेनानायक बन गए।

उन्हे पाचहजारी का मनसब भी मिल गया। बाद मे अहमदनगर के दरबारियो ने बीच मे पडकर जादोराय से उनका मेल करा दिया और अन्त मे जीजाबाई का ब्याह भी शाहजी से हो गया।

मल्लू के मरने पर शाहजी को अहमदनगर के दरबार से अपने पिता के अधिकार और जागीर मिली। शाहजी बडे हौसले के आदमी थे। शीघ्र ही लोगो ने देखा कि बेटा बाप से बढ-चढकर है। यह वह समय था जब बादशाह जहागीर के सेनापति दक्षिण विजय करने की धुन मे थे। और अहमदनगर के प्रसिद्ध सेनापति वज़ीर मलिक अम्बर उनसे लड रहा था। मलिक अम्बर अबिसीनिया का निवासी था। अपनी योग्यता से वह अहमदनगर की निज़ामशाही सेना का सेनापति व प्रधान वज़ीर बन गया था। वह बहुत अच्छा प्रबन्धक और मालमन्त्री तथा उच्चकोटि का सेनानायक था। उसने मराठो की सेना सगठित कर उन्हे गुरिल्ला युद्ध की शिक्षा दे सैन्य सचालन मे आश्चर्यजनक उन्नति की थी। जहागीर ने अब्दुररहीम खानखाना को उसे परास्त करने भेजा था, पर उन्हे हारकर भागना पडा। तब उसने शाहजादा परवेज को

खानदेश व गुजरात के सूबेदार अब्दुल्ला के साथ भेजा। परन्तु जब इसका भी कुछ परिणाम न निकला तो शाहजादा खुर्रम को भेजा।

यह सन् १६२० की बात है। शाहजी अपने कुटुम्बियो की एक छोटी-सी सैनिक टुकडी लेकर इस युद्ध मे शामिल हुए, तथा बडी वीरता प्रकट की। उनका नाम भी प्रसिद्ध हो गया। इस युद्ध मे उनके श्वसुर सामन्त लक्खूजी जादोराय भी लड रहे थे। यद्यपि इस युद्ध मे मलिक अम्बर की पराजय हुई, पर लक्खूजी जादोराय ने और शाहजी ने जो वीरता और शौर्य का प्रदर्शन किया, उससे मुगलो की सेना मे मराठो की धाक बैठ गई। मुगल सेनापति ने तब मरहठो को तोड-फोडकर अपने साथ मिलाना चाहा, जादोराय मुगलो से जा मिले। वहाँ उन्हे बडा रुतबा और जागीर मिली, पर शाहजी ने श्वसुर का साथ नही दिया। वे अपनी पुरानी सरकार के साथ ही रहे।

१६२७ मे जहाँगीर मर गया और इसके बाद १६२८ मे शाहजहाँ बादशाह हुआ। उसने सेनापति खानजहाँ को दक्षिण से वापस बुला लिया, पर खानजहाँ से शाहजहाँ खुश न था। इसलिए वह भागकर फिर दक्षिण आ गया और निजामशाह की शरण मे पहुँचा। शाहजहाँ ने उसे पकडने को सेना भेजी, पर शाहजी भोसले ने सब हिन्दू सरदारो को लेकर शाही सेना को खदेड दिया। इससे क्रुद्ध होकर शाहजहाँ ने खुद एक बडी सेना लेकर दक्षिण पर चढाई की। अन्तत खानजहा भाग खडा हुआ। इसी समय मलिक अम्बर की भी मृत्यु हो गई। तब शाहजी ने भी अपनी सेवाएँ शाहजहाँ को अर्पित कर दी। शाहजहा ने उन्हे छ-हजारी जात का मनसब और पाच हजार सवारो का सेनापति बना दिया। साथ ही बहुत-सी नई जागीरे भी दी। परन्तु वह निजामशाह के शुभचिन्तक बने रहे। कुछ काल बाद निजामशाही के वजीर मलिक अम्बर के पुत्र फतहखाँ ने अपने बादशाह को कत्ल करके शाहजहाँ से सन्धि कर ली। तब शाहजी निजामशाही छोडकर बीजापुर दरबार की सेवा मे आ गए।

शाहजी बडे अवसरवादी थे। वे अवसर कभी नही चूकते थे। इस समय उनका नाम इतना प्रसिद्ध हो गया था कि बीजापुर के आदिलशाह ने उनकी पूरी आवभगत की। यह वह समय था जब फतहखॉ ने मुगल सेनापति महावतखॉ से मिलकर बीजापुर की राजधानी दौलताबाद पर चढाई की थी। शाहजी ने इस युद्ध मे बडी वीरता प्रकट की। बाद मे जब बीजापुर और फतहखॉ मे सन्धि हुई तो सन्धि की एक शर्त यह भी थी कि शाहजी को वीरता के उपलक्ष्य मे पुरस्कार मिले। फतहखाँ ने बीजापुर से सधि होते ही मुगलो पर धावा बोल दिया। परन्तु फतहखॉ को मुँह की खानी पडी और महाबतखाँ ने उसे कैद कर लिया। अहमदनगर राज्य का मुगल साम्राज्य मे विलय हो गया। अब महावतखॉ ने यह योजना बनाई कि शाहजी को भी जीत लिया जाए तो बीजापुर और अहमदनगर के दोनो राज्यो पर मुगलो का अधिकार हो जाए। उसने अवसर पाकर शाहजी की पत्नी जीजाबाई और बालक शिवाजी को पकड लिया। परन्तु मराठो ने उन्हे छुडाकर कोण्डाना दुर्ग मे भिजवा दिया। इसी समय आगरे मे सम्राज्ञी मुमताजमहल का देहान्त हो गया और शाहजहाँ ताजमहल निर्माण मे व्यस्त हो गया। इधर अवसर पाकर शाहजी ने अब दूसरा पैतरा बदला। फतहखॉ कैद हो चुका था और उसने जो बादशाह तख्त पर बैठाया था, उसे भी गिरफ्तार करके महावतखॉ ने ग्वालियर के किले मे भेज दिया था। शाहजी ने तत्काल अहमदनगर के शाही खानदान के एक अल्पवयस्क बालक को सिहासन पर बैठाकर उसका राज्याभिषेक कर दिया और पूना तथा चाकण से लेकर बालाघाट तक के सारे प्रदेश तथा गुन्नूर के आस-पास का सारा निजामी इलाका छीनकर अपने अधिकार मे कर लिया और जुन्नर शहर को राजधानी बनाकर उसी सुलतान के नाम पर शासन करना आरम्भ कर दिया।

बीजापुर राज्य मे इस समय दो बलशाली सामन्त थे—अदरुल्लाखॉ और मुन्दुपत। दोनो ही शाहजी के समर्थक थे। गुप्त रूप से बीजापुर

का शाह भी उनका समर्थक और सहायक था। इन सब बातों को सुनकर शाहजहां बहुत क्रुद्ध हो उठा। उसका बहुत रुपया और समय दक्षिण में व्यय हुआ था। बीजापुर इस समय भी मुगलों से उलझा हुआ था। अतः उसे शाहजी जैसे सुलझे हुए सेनापति की सहायता अपेक्षित थी। उधर मुगल बादशाह दो पीढ़ियों से दक्षिण की सिरदर्दी उठा रहे थे। इन सब घटनाओं ने शाहजी को सब उत्तरी-दक्षिणी शक्तियों का केन्द्र बना दिया। अन्ततः शाहजहाँ ने ४० हजार सैन्य देकर शाइस्ताखाँ और अलीवर्दीखाँ को दक्षिण भेजा। उन्होंने दक्षिण की मुगल सेना से मिलकर बीजापुर और शाहजी दोनों ही को जड़-मूल से खोद फैंकने का निश्चय किया। शाहजी ने तीन बरस तक इस संयुक्त मोर्चे से लोहा लिया। बहुत-से किले और इलाके शाहजी के हाथ से निकल गए, पर शाहजी को पकड़ने के उनके सब प्रयत्न विफल हुए। वह लड़ते हुए कोंकण तक चले गए। अन्ततः बीजापुर ने शाहजहां से संधि कर ली और उस संधि के अनुसार शाहजी ने भी बालक शाह को मुगलों को सौंपकर बीजापुर के अली आदिलशाह की नौकरी कर ली। बीजापुर ने शाहजी का अच्छा सत्कार किया। उन्हें उनकी पूरी जागीर दे दी गई जिसमें पूना की जागीर भी सम्मिलित थी। बाद में कुहार-रूसकटी-बगलौर-बालापुर और सूपा भी उनके अधिकार में आ गए और बरार के २२ गाँवों की देशमुखी भी उन्हें दे दी गई। इस प्रकार शाहजी को बहुत-सी जागीर और इलाका मिल गया और वे एक प्रकार से राजा की भाँति रहने लगे।

४

शिवाजी

शाहजी का पहिला विवाह जीजाबाई के साथ हुआ था। जीजाबाई की पहिली संतान शम्भाजी थे, वह अपने पिता के साथ ही रहते थे।

शिवाजी शाहजी और जीजाबाई के दूसरे पुत्र थे। इनका जन्म जुन्नर शहर के पास शिवनेर के पहाड़ी किले मे सन् १६२७ मे हुआ। इस समय शाहजी और उनके श्वसुर लक्खूजी जादोराय एक-दूसरे के विरुद्ध लड रहे थे। जादोराय मुगलो से मिल गए थे, पर शाहजी अपनी पुरानी सरकार के ही साथ थे। इस पैतृक झगडे के कारण जीजाबाई और शाहजी मे वैमनस्य हो गया। इसी समय जीजाबाई और उनके शिशु पुत्र को मुसलमानो ने कब्जे मे कर लिया। जीजाबाई को किसी तरह कोण्डाना दुर्ग मे भेज दिया गया जहाँ वह एक प्रकार से नजरबन्द रहती थी, पर उन्होने अपने पुत्र को छिपा दिया ताकि वह मुसलमानो के हाथ न लगे। आजकल जब कि पॉच-छ वर्ष के बच्चे खेल-कूद मे मस्त रहते है, तब ६ वर्ष के शिवाजी मुसलमानो के भय से इधर-उधर छिपते फिर रहे थे। सन् १६३६ तक शिवाजी अपने पिता का मुख तक न देख सके। सन् १६३० ही मे शाहजी ने एक दूसरे खानदान मे विवाह कर लिया था।

शाहजी जब फिर बीजापुर राज्य की नौकरी मे गए तो उस समय शिवाजी की आयु १० वर्ष की थी। शाहजी बीजापुर के लिए नये प्रदेश जीतने और अपने लिए नई जागीर प्राप्त करने के लिए तुग-भद्रा और मैसूर के पठार की ओर बढे और वहाँ से मद्रास के समुद्र-तट की ओर बढ गए। इस चढाई के बाद उन्होने जीजाबाई और शिवाजी को मुक्त किया और आकर पहली बार पुत्र का मुँह देखा और उसका विवाह किया। शिवाजी का विवाह करके वे कर्नाटक की लडाई को प्रस्थान कर गए और पत्नी तथा पुत्र को अपनी जायदाद के कारभारी दादाजी कोडदेव की देखरेख मे पूना भेज दिया, और अपनी दूसरी पत्नी तुकाबाई और उसके पुत्र व्यकोजी को अपने साथ रखा। पति की इस उपेक्षा का जीजाबाई के मन पर भारी प्रभाव पडा, और उनकी वृत्ति अन्तर्मुखी होकर धार्मिक हो गई, जिसका प्रभाव शिवाजी पर भी पडा। इस समय शिवाजी के साथ खेलने के लिए न कोई बालक साथी था, न भाई-बहन थे, न पिता का सहवास था। विवाह का वे महत्त्व न समझते थे। इस

एकाकीपन ने शिवाजी को अपनी माता के अधिक निकट ला दिया और वे मातृप्रेम मे अभिभूत हो माता को देवी के समान पूजने लगे। इस उपेक्षा और एकाकी जीवन ने शिवाजी को स्वावलम्बी, दबग और स्वतन्त्र विचारक बना दिया। उनमे एक ऐसी अन्त प्रेरणा उत्पन्न हो गई कि वे आगे चलकर सब काम अन्त प्रेरणा से ही करने लगे। दूसरे के आदेश-निर्देश की उन्हे परवाह न रही। घुडसवारी, शिकार और युद्ध मे वे पूरे मनोयोग से प्रवीण हो गए। साथ ही माता ने उन्हे पुराणो की कहानियाँ और धर्मोपाख्यान सुनाकर उनकी वृत्ति को कट्टर हिन्दू बना दिया। पूना जिले का यह पश्चिमी भाग जो सह्याद्रि पर्वत-शृखला की तलहटी मे घने जगलो के किनारे-किनारे दूर तक चला गया था, मावल कहलाता था। यहाँ मावले किसान रहते थे, जो बडे परिश्रमी और साहसी थे। शिवाजी ने उन्ही मावले तरुणो को चुनकर एक छोटी-सी टोली बनाई और उनके साथ सह्याद्रि की चोटियो, घाटियो और नदी किनारे जगलो मे चक्कर काटना आरम्भ किया, जिससे उनका दैनिक जीवन कठोर और सहिष्णु हो गया। धर्म-भावना के साथ चरित्र की दृढता ने उनमे स्वातन्त्र्य-प्रेम की स्थापना की, और उनके मन मे विदेशियो के हाथ से महाराष्ट्र का उद्धार करने की भावना पनपती गई।

५

बचपन का उठान

मुरारजी पन्त ने बीजापुर दरबार से आकर जीजाबाई को मुजरा किया और कहा—"महाराज की आज्ञा है कि शिवाजी बीजापुर दरबार मे उपस्थित होकर शाह को सलाम करे। शाह की भी यही मर्जी है। अत. आप उन्हे मेरे साथ भेज दीजिए।"

परन्तु यह प्रस्ताव बालक शिवाजी ने अस्वीकार कर दिया।

कहा—"मैं सलाम नही करूँगा।"

"क्यो नही करोगे, बेटे ? शाह को सलाम करना हमारा धर्म है। हम उनके नौकर है।" जीजाबाई ने कहा।

"मै तो नौकर नही हूँ, माँ।"

"पुत्र, तुम्हारे पिता नौकर है। यह जागीर बादशाह की दी हुई है।"

"किन्तु मै अपनी तलवार से जागीर प्राप्त करूँगा।"

"यह समय ऐसी बाते कहने का नही है। पुत्र, तुम शाही सेवा मे चले जाओ।"

"नही जाऊँगा।"

"यह तुम्हारे पिता की आज्ञा है पुत्र, जाना होगा।"

"अच्छा जाता हूँ, पर सलाम मै नही करूँगा।"

मुरारजी पन्त उन्हे समझा-बुझाकर दरबार मे ले गए। शाहजी वहाँ उपस्थित थे। उन्होने बालक शिवाजी को शाह के सम्मुख उपस्थित किया। परन्तु शिवाजी शाह को साधारण सलाम करके खडे हो गए, न मुजरा किया न कोर्निश। चुपचाप ताकते खडे रहे।

शाही अदब भग हो गया। यह देख शाह ने वज़ीर से कहा—"शिवा से पूछो कि क्या वजह है, उसने दरबारी अदब से कोर्निश नही की।"

शिवाजी ने कहा—"मै जैसे पिताजी को सलाम-मुजरा करता हूँ वैसे ही आपको की है, पिताजी के समान समझकर।"

शाह यह जवाब सुनकर हँस पडे। उन्होने शाहजी की ओर देखकर कहा—"शिवा होनहार लडका है। हम इसपर खुश है।"

शाहजी ने नम्रता से कहा, "बेअदबी माफ हो, बच्चा है, दरबारी अदब नही जानता।"

बादशाह ने भी हँसकर पूछा—"शिवा की शादी हुई है या नही ?"

"जी हाँ, पूना मे इसका ब्याह हुआ है।"

"लेकिन उसने माबदौलत को अपना बाप कहा है। बस, उसकी एक शादी हमारे हुजूर मे होगी और हम खुद बाप की सब रसम अदा करेगे। लडकी की तलाश करो।"

शाहजी ने झुककर बादशाह को सलाम किया और कहा—"हुक्म तामील होगा।" और दरबार से चले आए।

शिवाजी ने डेरे पर लौटकर स्नान किया। बीजापुर मे शिवा का दूसरा विवाह बडी धूमधाम से हुआ। बादशाह आदिलशाह ने खुद सब अमीर-उमराव के साथ शरीक होकर सब नेग भुगताए। शाहजी ने भी बादशाह की खूब आवभगत की।

नया ब्याह कर शिवाजी शीघ्र ही पूना लौट आए। परन्तु दरबार मे अपने पिता की शाह के सामने दासता देख उनका जी दुख से भर गया। वे खिन्न रहने लगे।

दादा कोडदेव बडे अच्छे मुत्सद्दी और राजनीति-विचक्षण पुरुष थे। उन्होने शिवाजी मे महापुरुषो के लक्षण देख लिए थे। वे कहा करते थे—हमारा शिवा शिव का साक्षात् अवतार है और भवानी का वरद पुत्र है। उन्होने उन्हे राज्य-प्रबन्ध, धर्मशास्त्र, युद्ध-कौशल की बहुत अच्छी शिक्षा दी। उनके ही अध्यवसाय से इलाके की आय और आबादी बढ गई थी। वे बीच-बीच मे शिवाजी को नीति, धर्म और रियासत के काम की भी शिक्षा देते थे। इस इलाके मे मावली लोगो की बस्ती थी जो दरिद्र किन्तु वीर होते थे। दादा ने उन्हे अनुशासन की शिक्षा दी थी। बहुत-सी जमीन देकर उन्हे मेहनती कृषक बनाया था। उन दिनों मरहठो मे लिखने-पढने का रिवाज बिलकुल न था, पर दादा ने शिवाजी की रुचि पढने-लिखने मे देखी। घुडसवारी, तीर, नेजा, तलवार चलाने तथा मल्लयुद्ध मे शिवाजी इसी उम्र मे चाक-चौबन्द हो गए थे।

सबसे बडा प्रभाव उनपर रामायण और महाभारत का पडा था। यह शिक्षा उन्हे दादा तो देते ही थे, परन्तु उनकी माता भी देती थी। वे बडी भारी रामभक्त थी। शिवाजी बडे प्रेम से रामायण-महाभारत

की कथा-वार्ता सुनने और उसपर चर्चा करते थे।

धीरे-धीरे मावले तरुणों से शिवाजी की जान-पहचान और घनिष्ठता होती गई। अब वह कभी-कभी दिन-दिन-भर घर से गायब रहते और इन्हीं मावले तरुणों के साथ वन-पर्वतों में घूमा करते, शिकार करते या शस्त्राभ्यास करते थे। उनकी यह जमात अपने को सब बन्धनों से मुक्त समझती थी। वह किसी भी राज्य-व्यवस्था की पाबन्द नहीं थी। वह पूर्णतया स्वतन्त्र थी। यदा-कदा यह मंडली कभी बीजापुर और कभी मुगलों की अमलदारी में घुस जाती और लूटमार करके भाग आती। धीरे-धीरे प्रसिद्ध हो गया कि शाहजी का लड़का शिवा डाकू हो गया है और वह लूटपाट करता फिरता है।

दादा कोंडदेव के पास ऐसी शिकायतें आतीं, तो वे उन्हें सुनी-अनसुनी कर देते, परन्तु शिवाजी के चरित्र पर वे नजर अवश्य रखते थे। धीरे-धीरे रियासत की देखभाल का बोझ वे उनपर डालने लगे। और इसमें शिवाजी का बहुत-सा समय लगने लगा।

शाहजी की जागीर में कोई किला न था और शिवाजी के मन में यह अभिलाषा थी कि कोई किला उन्हें हथियाना चाहिए। बस उन्होंने साथियों को अपने अभिप्राय से अवगत किया और उन्होंने उसका समर्थन किया। अब वे इसी धुन में रहने लगे कि कैसे कोई किला उनके हाथ लगे।

६

माता और पुत्र

"क्यों रे शिव्वा, अभी तू अठाईस बरस का भी नहीं हुआ और अभी से इतना उद्दण्ड हो गया! दादा के पास शिकायतें आई हैं। तू दिन-दिन-भर रहता कहां है, बोल?"

"माता, मै तो तुम्हारी गोद मे ही रहता हूँ।"

"झूठा कहीं का। मैने तुझे इतनी कथा-भागवत सुनाई सो ·?"

"सो वह व्यर्थ नही जाएगी, माता। आप ही तो मेरी आदि-गुरु है।"

"अरे, मैने तो तुझसे शभा से अधिक आशा की थी। तेरे पिता ने तो ग्यारह बरस तेरा मुँह भी नही देखा, मैने ही तुझे आख का तारा बनाकर रखा।"

"तो माता, क्या पिताजी ने मेरे विषय मे कुछ लिखा है ?"

"अरे, तूने उनकी प्रतिष्ठा मे बट्टा लगा दिया। उस दिन तूने दरबार मे जाकर शाह को सलाम नही किया। सलाम करता तो तुझे शाही रुतबा मिलता। बादशाह ने तेरी तारीफ सुनकर ही बुलाया था। बेचारे मुरारजी पन्त को कितना लज्जित होना पडा, यह तो देख।"

"माता, जिस दिन मै पिता की प्रतिष्ठा को बट्टा लगाऊगा उसी दिन प्राण त्याग दूंगा। पर शाह को सलाम तो मैं नही करूँगा।"

"अरे वे हमारे मालिक है, यह भी तो देख।"

"वे गौ-ब्राह्मण के शत्रु है, और मै उनका रक्षक, मै तो यही जानता हू।"

"लेकिन शिव्वा, तेरे बाबा मालोजी भोसले और उनके भाई बिठोजी एक साधारण किलेदार थे। पर थे बडे वीर। अब तुम्हारे पिता के बाहुबल से आज हम इतने बडे जागीरदार हुए। पर सब शाही कृपा से। निजामशाह ने उन्हे बारहहजारी का मनसब और राजा की उपाधि दी, तथा पूना और सूमा के जिले दिए।"

"यह तो मैं जानता हूँ, मा।"

"तो देख, तेरे दादा और पिता भी तो हिन्दू है। धर्म से डिगे तो नही, फिर भी समय देखकर काम करना पडता है। पहाड मे सिर मारने से पहाड नही टूटता, सिर ही फूटता है।"

"परन्तु माँ, धर्म भी एक वस्तु है। आप ही ने मुझे धर्म की शिक्षा

दी है।"

"तो अब क्या मैं तुझे धर्म से विमुख होने को कहती हूँ ?"

"पर हमारा धर्म तो गौ-ब्राह्मण की रक्षा करना है।"

"तू बड़ा जिद्दी है शिव्वा, यथाशक्ति गौ-ब्राह्मण की भी रक्षा की जायगी। पर राजधर्म का भी तो पालन होना चाहिए।"

"तो हम प्रजापीडको की सहायता करके राजधर्म कैसे पालन करेगे ?"

"तो तू क्या समझता है, तू आदिलशाही को ध्वस्त कर देगा ?"

"माता, तुम क्या समझती हो ?"

"मै तो बेटा यही समझती हूँ कि तू जिस मार्ग पर चल रहा है, उससे अपना पुश्तैनी वैभव जायगा।"

"माता, उत्तर और दक्षिण की शाहियो मे यही अन्तर है। उत्तर की मुगलशाही विदेशी तुर्क-तातार-पठानो के बल पर पनपी, पर यहाँ दक्षिण मे ये आदिलशाही और कुतुबशाहिया हम मराठो के बल पर ही पनप रही है।"

"अरे तो अकेला तू क्या कर लेगा ? जब भगवान ही की यह इच्छा है कि म्लेच्छ भारत पर राज्य करे, तो तू क्या करेगा ?"

"तो माता, तुम समझती हो भगवान विट्ठल म्लेच्छो के सहायक है ?"

"है ही। ऐसा न होता तो हम हारते क्यो ? मरहठे क्या मुसलमानो से वीरता मे कम है !"

"कोरी वीरता से क्या होता है ? हमारी वीरता मे दासता का जो पुट लगा है ?"

"तो तू क्या चाहता है, वह कह।"

"माता, आशीर्वाद दो कि मरहठो की वीरता को दासता की कालिख से मुक्त करने मे तुम्हारा शिव्वा समर्थ हो।"

"आशीर्वाद देती हूँ। पर बेटे, अपने बलाबल का भी तो ध्यान रख।

व्यर्थ शाहियो को छेड-छाडकर अपने सिर बला न बुला। तेरे पिता ने जैसे अपना यश और मान बढाया है, वैसे ही तू भी बढा। समय बलवान है यह मत भूल।"

"यह तो मुझसे न हो सकेगा मा, तुम कहो तो मैं कही देश से बाहर चला जाऊँ।"

"चल, फिर मै भी तेरे साथ चलू।"

"आप क्यो चलेगी ?"

"तो मै क्या तुझे छोड दूगी ? सुख-दुख मे मै तेरे साथ ही रहूगी। मैं जानती हू, मेरी कोख मे तू अवतारी जन्मा है। तुझे मैं क्या समझाऊ, मैं तो प्रेमवश कहती हू।"

शिवाजी माता के चरणो मे लोट गए और बोले—"माता, आश्वस्त रहो। तुम्हारा शिवा प्राण रहते ऐसा कोई काम न करेगा जो तुम्हारी कोख को लजाए।"

माता पुत्र को छाती से लगाकर प्रेम मे आसू बहाती रही।

७

शिवाजी का उदय

सन् १६४६ मे दादाजी कोडदेव की मृत्यु हो जाने पर शिवाजी ने अपनी स्वतन्त्रता की हुंकार भरी और पहला वार तोरण के किले पर किया। यह किला पूना के पश्चिम मे २० मील पर था। वहाँ के किलेदार से उन्होने किला छीन लिया। किले मे बीजापुर राज्य के खजाने के दो लाख हूण शिवाजी के हाथ लगे। उन्होने वकील भेजकर बीजापुर दरबार मे प्रकट किया कि उन्होने यह काम राज्य के हित की दृष्टि से किया है। दूत ने शिवाजी की बहुत प्रशसा की, और निवेदन किया कि शिवाजी पहले जागीरदारो की अपेक्षा दुगना लगान देगे।

इसके बाद उन्होने तोरण से कोई पाँच मील दूर पूर्व मे पहाडी की एक चोटी पर राजगढ नाम का एक नया किला बनाया और उसे अपना केन्द्रस्थान निश्चित किया। कुछ दिन बाद उन्होने बीजापुर का कोण्डाना किला भी कब्जे मे कर लिया और शाहजी की पश्चिमी जागीर के उन सभी भागो को अपने अधिकार मे कर लिया जिनकी देखभाल दादाजी कोडदेव करते थे।

जब शिवाजी की इन हरकतो की सूचनाएँ लगातार बीजापुर पहुँची तो वहाँ से शिवाजी के नाम इस प्रकार के परवाने जारी किए गए कि वह अपनी हरकतो से बाज आए। परन्तु शिवाजी ने उनकी कोई परवाह नही की, न कोई जवाब दिया। तब शाह ने कर्नाटक मे शाहजी को लिखा कि वह अपने लडके को समझाए। परन्तु उन्होने साफ जवाब दे दिया कि शिवाजी ने मेरी सम्मति के बिना ही यह काम किया है। पर मै और मेरे सब सम्बन्धी भी दरबार के शुभचिन्तक हैं। और शिवाजी भी जो कुछ कर रहा है, वह जागीर की उन्नति के लिए ही है। शाहजी ने शिवाजी को भी खत लिखा कि ऐसी कार्यवाहियो से बाज आए। पर शिवाजी के हृदय मे जो आग दहक रही थी, उसे वे क्या जानते थे! उन्होने मालगुजारी का हिसाब भी मागा, क्योकि अब सब रियासत की देखभाल शिवाजी ही करते थे, परन्तु शिवाजी ने लिख दिया कि इलाका निर्धन है और उसकी आय खर्च के लिए ही काफी नही है, बचत की कोई गुजाइश नही है। इस समय जागीर मे दो आदमी शिवाजी के विरोधी थे, एक तो था चाकण का किलेदार, दूसरा शिवाजी का सौतेला मामा था जो सोमा जिले का जिलेदार था। चाकण के किलेदार को तो आसानी से शिवाजी ने अधीन कर लिया, पर दूसरे को कैद करना पडा। अब शिवाजी ने सिहगढ, कर्णाटक और पुरन्दर के किले भी अपने अधीन कर लिए। बीजापुर का शाह इस समय रोगशय्या पर पडा-पडा महल और मकबरे बनवा रहा था, और सेनापति शाहजी कर्णाटक की लडाइयो मे दौडधूप कर रहे थे।

निरन्तर शिवाजी की इन विजयो से विचलित होकर आदिलशाह क्रुद्ध हो गया और उसने एक बडी सेना शिवाजी के विरुद्ध भेजने का इरादा किया। पर दरबार मे शाहजी के मित्र भी थे, उन्होने उसे समझाया कि शिवाजी की यह हलचल रियासत के लिए लाभदायक है। इससे राज्य की दक्षिणी सीमाए सुरक्षित और दृढ होती है।

शिवाजी की हरकते जारी रही। उन्होने कोलाबा पर आक्रमण करके वहाँ के सरदारो को मिला लिया। परन्तु जब उन्होने आगे बढकर कल्याण दुर्ग भी अधिकृत कर लिया, तब तो आदिलशाह एकदम आपे से बाहर हो गया। उसने शिवाजी को दण्ड देने को एक बडी सेना भेजी।

८

गुरु और शिष्य

पूना से पश्चिम की ओर, सह्याद्रि शृग के एक दुरूह शिखर पर एक अति प्राचीन, शायद बौद्धकालीन, गुफा है। उसके निकट घने वृक्षो का झुरमुट है। अमृत के समान मीठे पानी का एक झरना भी है। इसी गुफा के सम्मुख, कोई एक तीर के अतर पर, एक विस्तृत मैदान है। उसे खास तौर पर साफ और समतल बनाया गया है।

वहाँ एक बलिष्ठ युवक बर्छा फेंकने का अभ्यास कर रहा था। युवक गौरवर्ण, सुन्दर, ठिगना और लोहे के समान ठोस था। उसने अपने सुगठित हाथो मे बर्छा उठाया, और तौलकर एक वृक्ष को लक्ष्य करके फेका। बर्छा वृक्ष को चीरता हुआ पार निकल गया। गभीर स्वर मे किसीने कहा—"ठीक नही हुआ, तुम्हारा लक्ष्य चलित हो गया।"

युवक ने माथे का पसीना पोछकर पीछे फिरकर देखा। एक जटिल संन्यासी तीव्र दृष्टि से युवक तो ताक रहे थे। युवक ने सिर झुका लिया। सन्यासी अग्रसर हुए। उन्होने बर्छे को क्षण-भर तौला और विद्युत्-वेग

से फेक दिया। बर्छा स्थूल वृक्ष को चीरता हुआ क्षण-भर ही मे धरती मे घुस गया। उत्साहित होकर युवक ने एक ही झटके मे बर्छा उखाडा, और महावेग से फेका। इस बार बर्छा वृक्ष को चीरकर धरती मे घुस गया। सन्यासी ने मुस्कराते हुए कहा—"हा, यह कुछ हुआ। वत्स, मैं तो वृद्ध हुआ, युवक-सा पौरुष कहा ? हा, तुम अभी और भी स्फूर्ति उत्पन्न करो।"

युवक ने गुरु के चरणो मे प्रणाम किया, और दोनो ने तलवारे निकाल ली। प्रथम मद, फिर वेग और उसके बाद प्रचड गति से दोनो गुरु-शिष्य तलवारे चलाने लगे, मानो बिजलिया टकरा रही हो। दोनो महाप्राण पुरुष पसीने से लथपथ हो गए। श्वास चढ गया, परन्तु उनका युद्ध-वेग कम न हुआ। दोनो ही चीते की भाति उछल-उछलकर वार कर रहे थे। तलवारे झनझना रही थी। गुरु ने ललकारकर कहा—"बेटे, लो, एक सच्चा वार तो करो। देखे शत्रु को तुम किस भाति हनन करोगे।"

युवक ने आवेश ने आकर सन्यासी के मोढे पर भरपूर वार किया। सन्यासी ने कतराकर एक जनेवा का हाथ जो दिया तो युवक की तलवार झन्नाकर दस हाथ दूर जा पडी। सन्यासी ने युवक के कठ पर तलवार रखकर कहा—"वत्स, बस, यही तुम्हारा कौशल है ? इस समय शत्रु क्या तुम्हे जीवित छोडता ?"

युवक ने लज्जा से लाल होकर गुरु के चरण छुए, और फिर तलवार उठा ली। इस बार उसने अधाधुन्ध वार किए, पर सन्यासी मानो विदेह पुरुष थे। उनका शरीर मानो दैवकवच से रक्षित था। वह वार बचाते, युवक को सावधान करते और तत्काल उसके शरीर पर तलवार छुवा देते थे। अत मे युवक का दम बिलकुल फूल गया। उसने तलवार गुरु के चरणो मे रख दी, और स्वय भी लोट गया। गुरु ने उसे छाती से लगाया और कहा—"वत्स, आज ही श्रावणी पूर्णिमा है, महाराज अभी आते होगे। आज तुम्हे इस सन्यासी को त्यागना होगा और जिस

पवित्र व्रत को तुमने लिया है, उसमे अग्रसर होना होगा। यद्यपि मै जैसा चाहता था, वैसा तो नही, पर फिर भी तुम पृथ्वी पर अजेय योद्धा हो, तुम्हारी तलवार और बर्छे के सम्मुख कोई वीर स्थिर नही रह सकता।"

युवक फिर गुरु-चरणो मे लोट गया। उसने कहा—"प्रभो, अभी मुझे और कुछ सेवा करने दीजिए।"

"नही, वत्स! अभी तुम्हे बहुत कार्य करना है, उसकी साधना ही मेरी चरण-सेवा है।"

हठात् वज्र-ध्वनि हुई—"छत्रपति महाराज शिवाजी की जय!"

दोनो ने देखा, महाराज घोडे से उतर रहे है। उन्होने धीरे-धीरे आकर सन्यासी की चरण-रज ली और सन्यासी ने उन्हे उठाकर आशीर्वाद दिया। युवक ने आकर महाराज के सम्मुख घुटनो के बल बैठकर प्रणाम किया। महाराज ने कहा—"युवक, आज वही श्रावणी पूर्णिमा है।"

"जी।"

"आज उस घटना को तीन वर्ष हो गए, जब तुम्हे घायल करके शत्रु तुम्हारी बहन को हरण कर ले गए थे, तुम्हे स्मरण है?"

"हा महाराज, और आपने मुझे जीवन-दान दिया था, मैने यह प्राण और शरीर आपको भेट किए थे।"

"और तुमने प्रतिशोध की प्रतिज्ञा की थी?"

"जी हा।"

"मैंने तुम्हे गुरुजी की सेवा मे तीन वर्ष के लिए इसलिए रखा था कि तुम शरीर, आत्मा और भावना से गभीर एव दृढ बनो, तामसिक क्रोध का नाश करो, सात्त्विक तेज की ज्वाला से प्रज्वलित होओ।"

"हा महाराज, गुरु-कृपा से मैने आत्मशुद्धि की है।"

"और अब तुम वैयक्तिक स्वार्थ के दास तो नही?'

"नही प्रभो।"

"प्रतिशोध लोगे ?"

"अवश्य।"

"अपनी बहन का ?"

"नही, एक हिन्दू अबला की स्वतन्त्रता-हरण का, मर्यादारहित पाप का।"

"और तुममे वह शक्ति है ?"

"गुरु-चरणो की कृपा और महाराज की छत्रछाया मे उसे मै प्राप्त करूगा।"

"तुम्हारी तलवार मे धार है ?"

"है।"

"और तुम्हारी कलाई मे उसे धारण करने की शक्ति ?"

"है।"

"समय की प्रतीक्षा का धैर्य ?"

"प्रतीक्षा का धैर्य ?" युवक ने अधीर होकर कहा।

"हॉ धैर्य ?" महाराज ने कठोर स्वर मे कहा।

युवक का मस्तक झुक गया, और उसके नेत्रो से आँसुओ की धारा बह चली। उसने कहा—"महाराज, धैर्य तो नही है।" वह महाराज के चरणो मे गिर गया। महाराज ने उठाकर उसे छाती से लगाया। वे सन्यासी की ओर देखकर हँस दिए। उन्होने कहा—"गुरु की क्या आज्ञा है ?"

"ताना तैयार है, मैने उसे गुरु-दीक्षा दे दी है।" फिर कहा—"वत्स!"

युवक ने गुरु की ओर ऑखे उठाई। वे अब भी ऑसुओ से तर थी।

"शान्त हो, देखो, सदैव कर्तव्य समझकर कार्य करना। फल की चिन्ता न करना।" युवक चुप रहा।

"यदि फल की आकाक्षा करोगे, तो धैर्य से च्युत हो जाओगे और कदाचित् कर्तव्य से भी।"

"प्रभो, मैं अपनी भूल समझ गया।"

"जाओ पुत्र, महाराज की सेवा मे रहो, विजयी बनो। भारत के दुर्भाग्य को नष्ट करो। नवीन जीवन, नवीन युग का प्रवर्तन करो। धर्म, नीति, मर्यादा और सामाजिक स्वातन्त्र्य के लिए प्राण और शरीर एव पदार्थों का विसर्जन करो।"

युवक ने गुरु-चरणो मे मस्तक नवाया। सन्यासी के नेत्रो मे आँसू आ गए। उन्होने कहा—"वत्स, जाओ, जाओ। सन्यासी को अधिक आप्यायित न करो। वीतराग सन्यासी किसीके नही।"

इसके बाद उन्होंने महाराज से एक सकेत किया। महाराज सन्यासी को अभिवादन कर घोढे पर चढे। एक घोडे पर युवक चढा, और धीरे-धीरे वे उस पर्वत-शृग से उतर चले।

सन्यासी शिला-खण्ड की भाँति अचल रहकर उन्हे देखते रहे, जब तक कि वे आँख से ओझल नही हो गए।

९

तानाजी मलूसरे

पीछे जिस युवक की चर्चा है, वही तानाजी मलूसरे थे। यह वही युवक था जिससे मुमूर्षावस्था मे शिवाजी का प्रथम परिच्छेद मे मिलन हुआ था। शिवाजी ने इस युवक को धीर, वीर और काम का आदमी समझकर उसे शस्त्रास्त्र की सर्वोच्च शिक्षा देने प्रसिद्ध हरिनाथ स्वामी का अन्तर्वासी बनाया था, जो सह्याद्रि शैल पर एकान्तवास कर रहे थे। हरिनाथ स्वामी शस्त्रविद्या के प्रकाण्ड आचार्य थे और शिवाजी ने उनसे बाल्यकाल मे प्रेरणा पाई थी।

तानाजी मलूसरे कोकण प्रान्त के निवासी थे जहाँ शिवाजी ने प्रारम्भिक विजय प्राप्त की थीं। इस समय तीन तरुण सरदार शिवाजी के

उत्थान मे सहायक थे—एक तानाजी मलूसरे, दूसरे पेशाजी कक और तीसरे बाजीप्रभु पारूलकर। ये तीनो तरुण शिवाजी के समवयस्क तो थे ही, महाराष्ट्र की स्वतन्त्रता की आग भी इनके हृदय मे शिवाजी से कम नही थी। इसके अतिरिक्त वे बडे बाँके, वीर, कर्मठ राजपुरुष और दुर्दम्य साहसी पुरुष थे। इन्ही तीन सहायक मित्रो को लेकर शिवाजी ने अपनी विजय-यात्रा आरम्भ की थी, शिवाजी की माता जीजाबाई भी इन्हे शिवाजी के समान ही पुत्रवत् प्यार करती थी। वे निरन्तर उन्हे शौर्य-प्रदर्शन के लिए उकसाती रहती थी और शिवाजी ने इन्ही लोगो के बल-बूते पर दक्षिण के इस्लामी राज्य और मुगल राज्य को उखाड फेकने का बीडा उठाया था। प्रारम्भिक युद्धो मे तानाजी मलूसरे का प्रमुख हाथ रहा, और धीरे-धीरे मराठा सेना मे उनका नाम प्रेम और आदर से लिया जाने लगा।

तानाजी मलूसरे के प्राणो की रक्षा शिवाजी ने की थी, इसलिए तानाजी ने अपने प्राण उनपर न्योछावर कर देने की शपथ ली थी। इसके अतिरिक्त उनकी प्रिय बहन का अपहरण भी ऐसी घटना थी कि जिसके कारण उनका मन प्रतिहिसा की ज्वाला मे धधक रहा था। परन्तु हरिनाथ स्वामी ने उनके मन का वह कलुष धो डाला था और उन्हे शिक्षा दी थी कि यह केवल तुम्हारा व्यक्तिगत मामला ही नही है, तुम्हारी हजारो बहनो का इसी प्रकार अपहरण हुआ है। इसलिए इसे कोरा व्यक्तिगत प्रश्न न समझे और हिन्दूधर्म, अबलाओ की रक्षा, गौरक्षा और स्वाधीनता के लिए अपना जीवन उत्सर्ग करे।

तानाजी जैसे सुभट योद्धा और प्रचण्ड सेनापति थे, वैसे ही वे कष्ट-सहिष्णु और विचारशील भी थे। स्वभाव उनका सरल था और प्रकृति हसमुख थी, परन्तु मुद्दे की बात पर वे चट्टान की तरह अटल रहते थे।

१०

फिरगी से मुलाकात

"महाराज की जय हो, मेरी एक विनती है।"

"क्या कहते हो ?"

"बीजापुर की सेना परसो अवश्य ही तोरण दुर्ग पर आक्रमण करेगी।"

"सो तो सुन चुका हूँ।"

"दुर्ग की पूरी मरम्मत नही हो पाई है, ऐसी दशा मे वह आक्रमण न सह सकेगा।"

"मालूम तो ऐसा ही होता है।"

"परन्तु कल सध्या तक दुर्ग बिलकुल सुरक्षित हो जायगा।"

"यह तो अच्छी बात है।"

"परन्तु महाराज, अपराध क्षमा हो।"

"कहो।"

"एक निवेदन है।"

"क्या ?"

"केवल एक-एक मुट्ठी चना मेरे सैनिको और मजदूरो को मिल जाय, तो फिर वे कल सध्या तक और कुछ नही चाहते।"

"यह तो तुम जानते ही हो, वह मै न दे सकूंगा।"

तानाजी चुप रहे। महाराज भी चुप हो गए। वह चचल गति से इधर-उधर घूमने लगे।

एक प्रहरी ने सम्मुख आकर कहा—"महाराज, एक फिरगी दुर्ग-द्वार पर उपस्थित है, दर्शनो की इच्छा करता है।"

महाराज ने चकित होकर कहा—"फिरगी ? वह कहाँ से आया है ?"

"सूरत से आ रहा है।"

"साथ मे कौन है ?"

"दो सवार है।"

"वह चाहता क्या है ?"

"महाराज से मुलाकात करना।"

क्षण-भर महाराज ने कुछ सोचा, इसके बाद तानाजी को आज्ञा दी—"उसे महल के बाहरी कक्ष मे ले आओ।"

तानाजी ने 'जो आज्ञा' कहकर प्रस्थान किया, और महाराज भी कुछ सोचते हुए महल की ओर चले गए।

११

गहरा सौदा

"तुम्हारा देश कौन-सा है ?"

"फ्रास देश का अधिवासी हूँ।"

"क्या चाहते हो ?"

"महाराज, मै कुछ हथियार बीजापुर के बादशाह के हाथ बेचने लाया था, परन्तु यहा आने पर आपकी यशोगाथा का विस्तार प्रजा मे सुनकर इच्छा होती है, वे हथियार मै आपको दे दूं, यदि महाराज प्रसन्न हो। मेरे पास ५० तो छोटी विलायती तोपे है, ५ हजार बन्दूके और इतनी ही तलवारे है। सभी हथियार फ्रास देश के बने हुए है। और भी युद्ध-सामग्री है।"

महाराज ने मद हास्य से पूछा—"उनका मूल्य क्या है ?"

"महाराज को मै यह सब १० लाख रुपये मे दे दूँगा। यद्यपि माल बहुत अधिक मूल्य का है।"

महाराज की दृष्टि विचलित हुई। परन्तु उन्होने दृढ, गभीर स्वर से कहा—"मै कल इसी समय इसका उत्तर दूंगा। अभी तुम विश्राम

करो ।"

फिरंगी चला गया। महाराज अत्यन्त चंचल गति से टहलने लगे। रात्रि का अंधकार आया। तानाजी मशालें लिए किले की मरम्मत में संलग्न थे। महाराज ने उन्हें बुलाकर कहा—"तानाजी, अब समय आ गया। अभी सारी सेना को तैयार होने का आदेश दे दो।"

"जो आज्ञा महाराज, कूच कहां करना होगा?"

"इस फिरंगी का जहाज लूटना होगा।"

तानाजी आंखें फाड़-फाड़कर देखने लगे। क्षण-भर बाद बोले—"महाराज की जय हो! यह आज्ञा क्या आप दे रहे हैं?"

महाराज ने लपककर तानाजी की कलाई कसकर पकड़ ली। उन्होंने कहा—"युवक सेनापति! देखते हो, दुर्ग छिन्न-भिन्न और अरक्षित है। सेना के पास न शस्त्र, न घोड़े, और खजाने में इनको देने के लिए एक मुट्ठी चना भी नहीं। उधर विजयिनी यवन सेना बीजापुर से धावा मारकर आ रही है। क्या मैं समय और उपाय रहते पिस मरूं? ये हथियार भवानी ने मुझे दिए हैं। छोड़ूंगा कैसे? उस फिरंगी को कैद कर लो। उसे रुपया देकर मुक्त कर दिया जायगा। जाओ, सेना को अभी तैयार होने का आदेश दो। ठीक दोपहर रात्रि व्यतीत होते ही कूच होगा।"

तानाजी कुछ कह न सके। वह सेना को आदेश देने चल दिए।

१२

भवानी का प्रसाद

महाराज बैठे-बैठे ऊंघ रहे थे। पीछे दो शरीर-रक्षक चुपचाप खड़े थे। तानाजी ने सम्मुख आकर कहा—"महाराज की जय हो, कूच का समय हो गया है, सेना तैयार है।"

महाराज चोककर उठ बैठे। वह चमत्कृत थे। उन्होने कहा—"तानाजी ?"

"महाराज।"

"मुझे भवानी ने स्वप्न मे आदेश दिया है।"

"कैसा आदेश है, महाराज ?"

"यह सम्मुख मन्दिर की पीठ दिखाई पडती है न ?"

"हा महाराज !"

"अभी मै बैठे-बैठे सो गया। इसमे वह जो मोखा है, उसमे से रत्न-जटित गहनो से लदा हुआ एक हाथ निकलकर इसी स्थान की ओर सकेत करता है, मैने स्पष्ट सुना, किसीने कहा, यही खोदो।"

"महाराज की क्या आज्ञा है ?"

"भवानी का आदेश अवश्य पूरा होना चाहिए। उस स्थान को खुदवाओ।"

तत्काल चार बेलदारो ने खोदना प्रारम्भ किया। देखते-देखते बडा भारी गहरा गड्ढा हो गया। मिट्टी का ढेर लग गया। तानाजी ने ऊब-कर कहा—"महाराज, अब केवल एक पहर रात्रि रही है।"

"ठहरो, क्या नीचे मिट्टी ही मिट्टी है ?"

भीतर से एक बेलदार ने चिल्लाकर कहा—"महाराज ! पत्थर पर कुदाल लगा है।"

महाराज ने व्यग्र स्वर मे कहा—"सावधानी से खोदो।"

"महाराज की जय हो ! नीचे पटिया हे। उसमे एक लोहे का भारी कुण्डा है।"

"उसे बलपूर्वक उखाड लो।"

"महाराज, नीचे सीढिया प्रतीत होती है। प्रकाश आना चाहिए।"

प्रकाश आया। तानाजी नगी तलवार लेकर गड्ढे मे कूद गए। दो और भी वीर कूद गए। महाराज विकलता से खडे गभीर प्रतीक्षा करते रहे।

तानाजी ने बाहर आकर वस्त्रो की धूल झाडते हुए अपनी तलवार ऊची की और फिर तीन बार खूब जोर से कहा—"छत्रपति महाराजा शिवाजी की जय !" निकट खडी सेना प्रलय-गर्जन की भाति चिल्ला उठी—"छत्रपति महाराज की जय !"

इसके बाद तानाजी महाराज के निकट खडे हो गए।

महाराज ने पूछा—"भीतर क्या है ?"

"भवानी का प्रसाद है।"

"कितना है ?"

"चालीस देगे मुहरो की भरी रखी है। चादी के सिक्के भी इतने ही है। एक चादी की सदूकची मे बहुत-से रत्न है।"

महाराज एक बार प्रकम्पित वाणी से चिल्ला उठे—"जय भवानी माता की !" एक बार फिर वज्र-गर्जन हुआ। इसके बाद महाराज ने तानाजी को आदेश दिया—"सेना को विश्राम की आज्ञा दी जाय और सब खजाना सुरक्षित रूप से निकालकर तोशाखाने मे दाखिल कर दिया जाय।"

१३

पहली बोहनी

नगर के गण्य-मान्य जौहरी बैठे थे। वही चादी की सदूकची सम्मुख रखी थी। महाराज ने कहा—"इसका क्या मूल्य है ?"

"महाराज, इसका मूल्य कूतना असंभव है। यह मोतियो की माला ही अकेली दस लाख से कम मूल्य की नही।"

महाराज ने उन्हे विदा करके उस फ्रेच को बुलाकर कहा—"क्या तुम इन रत्नो का कुछ मूल्य अकित कर सकते हो ?"

फिरगी रत्नो की राशि देखकर दग रह गया। उसने बडे ध्यान से

मोतियो की माला को देखकर कहा—"यदि महाराज की आज्ञा हो, तो मैं इस अकेली माला के बदले मे अपने सम्पूर्ण हथियार दे सकता हूँ।"

महाराज मुस्कराए। उन्होने कहा—"उसे तुम रख लो, मेरे निकट वह ककड-पत्थर के समान है। वे सभी हथियार और सामग्री मुझे आज सध्या से पूर्व ही मिल जानी चाहिए।"

"जो आज्ञा महाराज!" फिरगी चला गया।

× × ×

चोबदार ने प्रवेश करके कहा—"महाराज की जय हो! एक चर सेवा मे उपस्थित हुआ चाहता है।"

"उसे अभी भेज दो।"

चर ने महाराज के चरणो मे सिर झुकाया।

"तुम हो महाभद्र।"

"महाराज की जय हो, सेवक इसी क्षण सुसमाचार निवेदन किया चाहता है।"

"क्या समाचार है?"

"कल्याण के हाकिम मुल्ला अहमद का भेजा हुआ एक भारी खजाना इसी मार्ग से बरार जा रहा है।"

"कितना खजाना है?"

"पैंतीस खच्चर मुहरे है।"

"सेना कितनी है?"

"पाँच हजार।"

"बीजापुरी सेना इस समय कहाँ है?"

"वह लोहगढ मे महाराज पर आक्रमण करने के लिए सन्नद्ध खडी है।"

"जाओ तानाजी मलूसरे को भेज दो, और स्वय यह पता लगाओ कि खजाना आज दोपहर रात तक कहाँ पहुँचेगा?"

"जो आज्ञा" कहकर चर ने प्रस्थान किया।

क्षण-भर बाद तानाजी ने प्रवेश कर कहा—"महाराज की क्या आज्ञा है ?"

"क्या वे सब हथियार मिल गए ?"

"जी महाराज !"

"तोपे कैसी है ?"

"अत्युत्तम, वे सभी बुर्जियो पर चढा दी गई ।"

"बन्दूके ?"

"सब नई और उत्तम है । सब बन्दूके, बर्छे और तलवार भी बॉट दी गई है ।"

"तुम्हारे पास कुल कितने घुडसवार है ?"

"सिर्फ पाच सौ ।"

"शेष ।"

"शेष सब अशिक्षित किसानो की भीड है । उन्हे शस्त्र अवश्य मिल गए है, परन्तु उन्हे चलाना कदाचित् वे नही जानते ।"

"बहुत ठीक, बीजापुर शाह का खजाना कल्याण से बरार जा रहा है । वह अवश्य वहॉ न पहुँचकर यहॉ आना चाहिए । परन्तु उसके साथ पॉच हजार चुने हुए सवार है । तुम अभी पॉच सौ सैनिक लेकर उन-पर धावा बोल दो ।

"जो आज्ञा ।"

"परन्तु युद्ध न करना, जैसे बने, उन्हे आगे बढने मे बाधा देना ।"

"जो आज्ञा ।"

"मै प्रभात होते-होते समस्त पैदल सेना सहित तुमसे मिल जाऊँगा ।"

"जो आज्ञा ।"

तानाजी ने तत्काल कूच कर दिया ।

१५

नया पैंतरा

दुपहरी की तीव्र सूर्य-किरणो मे धूल उडती देख यवन सैनिक सजग हो गए। उनके सरदार ने ललकारकर व्यूह-रचना की, और खच्चरो को खास इन्तजाम मे रखकर मोर्चेबन्दी पर डट गए। कूच रोक दिया गया।

तानाजी धुआँधार बढे चले आ रहे थे। दोपहर होते-होते उन्होने खजाना घर दबाया था। उन्होने देखा, यवन दल कूच रोककर, मोर्चा बाँधकर युद्ध-सन्नद्ध हो गया है। तानाजी ने भी आक्रमण रोककर वही मोर्चा डाल दिया। यवन दल ने देखा— शत्रु जो धावा बोलता हुआ पीछा कर रहा था, आक्रमण न करके वही मोर्चा बाँधकर रुक गया है। इसके क्या माने ? यवन सेनापति ने स्वय आक्रमण कर दिया।

यवन सेना को लौटकर धावा करते देख तानाजी ने शीघ्रता से पीछे हटना प्रारम्भ कर दिया। दो-तीन मील तक पीछा करने पर भी जब शत्रु भागता ही चला गया, तब यवन सेनापति ने आक्रमण रोककर सेना की शृखला बना फिर कूच बोल दिया।

परन्तु यह देखते ही तानाजी फिर लौटकर यवन सेना का पीछा करने लगे। यवन सेनापति ने यह देखा। उसने सोचा, डाकू घात लगाने की चिन्ता मे है। उसने क्रुद्ध होकर फिर एक बार लौटकर धावा किया, पर तानाजी फिर लौटकर भाग चले।

सध्याकाल हो गया। यवन सेनापति ने खीजकर कहा—"ये पहाडी चूहे न लडते है, और न भागते हैं, अवश्य अन्य सेना की प्रतीक्षा मे है। साथ ही कम भी हैं।" अत उसने व्यवस्था की कि तीन हजार सेना के साथ खजाना आगे बढे, और दो हजार सेना इन डाकुओ को यहाँ रोके रहे। इस व्यवस्था से आधी सेना के साथ खजाना आगे बढ गया। शेष दो हजार सैनिको ने वेग से तानाजी पर आक्रमण किया।

ताजाजी बडी फुर्ती से पीछे हटने लगे। धीरे-धीरे अन्धकार हो गया। यवन दल लौट गया। परन्तु चतुर तानाजी समझ गए कि खजाना आगे बढ गया है। वह उपाय सोचने लगे। एक सिपाही ने घोड़े से उतरकर तानाजी की रकाब पकडी। तानाजी ने पूछा—"क्या कहते हो ?"

"आप जो सोच रहे है, उसका उपाय मै जानता हूँ।"

"क्या उपाय है ?"

"यहाँ से बीस कोस पर एक गाँव है ?"

"फिर ?"

"वहाँ मेरे बहुत सम्बन्धी हैं।"

"अच्छा।"

"उस गाँव के पास एक घाटी है, जिसके दोनो ओर दुरूह, ऊँचे पर्वत है, और बीच मे सिर्फ दो सवारो के गुज़रने योग्य जगह है। यह घाटी लगभग पौन मील लम्बी है।"

तानाजी ने विचलित होकर कहा—"तुम चाहते क्या हो ?"

"यवन सेना वहाँ प्रात काल पहुँचेगी।"

"अच्छा फिर ?"

"मै एक मार्ग जानता हूँ, जिससे मै पहर रात्रि गए वहा पहुँच सकता हूँ। श्रीमान्, मुझे केवल पचास सवार दीजिए। मैं गाँव वालो को मिला लूँगा, और घाटी का द्वार रोक लूगा। यवन दल रक्षा की धारणा से तुरन्त घाटी मे प्रवेश करेगा। पीछे से आप घाटी के मुख को रोक लीजिए। शत्रु चूहेदानी मे मूसे के समान फँस जायगा।"

तानाजी गम्भीरतापूर्वक सोचने लगे। अन्त मे उन्होने कहा—"मैं तुम्हारी तजवीज़ पसन्द करता हूँ। पचास सैनिक चुन लो।"

सिपाही ने पचास सैनिक चुनकर चुपचाप खेत की पगडंडी का रास्ता लिया। तानाजी ने यवन दल पर फिर आक्रमण करने की तैयारी की।

१५

किश्त-मात

स्तब्ध रात्रि के सन्नाटे को चीरकर तुरही का शब्द हुआ। सोए हुए ग्रामवासी हडबडाकर उठ बैठे। देखा, ग्राम के बाहर थोड़े-से घुड़सवार खडे हैं।

गाँव के पटेल ने भयभीत होकर पूछा—"तुम लोग कौन हो और क्या चाहते हो ?"

सैनिको ने चिल्लाकर कहा—"हिन्दू-धर्म-रक्षक छत्रपति महाराज शिवाजी की जय !"

गाँव के निवासी भी चिल्ला उठे—"जय, महाराज शिवाजी की जय !"

एक सवार तीर की भाँति घोडा दौडाकर ग्रामवासियो के निकट आया। उसने कहा—"सावधान रहो, छत्रपति महाराज शिवाजी ने हिन्दू-धर्म के उद्धार का बीडा उठाया है, वे साक्षात् शिव के अवतार है। आज सूर्योदय होते ही तुम्हे उनके दर्शन होगे।"

यह सुनते ही ग्रामवासी चिल्ला उठे—"महाराज शिवाजी की जय !"

"पर सुनो, आज इस गाँव की परीक्षा है। भाइयो, यवन सेना इधर को आ रही है। आज इसी गाँव मे उसका अन्त होगा, और वीरता का सेहरा इस गाँव के नाम बँधेगा।"

ग्रामवासियो ने उत्साह से कहा—"हम तैयार हैं, हम प्राण देगे।"

"भाइयो, हमारी विजय होगी। प्राण देने की आवश्यकता नही। अभी दो पहर का समय हमे है। आओ, घाटी का उस पार का द्वार वृक्षो और पत्थरो से बन्द कर दे और सब लोग पर्वतो पर चढकर छिप बैठे। बडे-बडे पत्थर इकट्ठे रखे, ज्यो ही यवन दल घाटी मे घुसे, देखते

रहो । जब सब सेना घाटी मे पहुच जाय, ऊपर से पत्थरो की भारी मार करो । पीछे से मार्ग को महाराज शिवाजी स्वय रोकेंगे ।" समस्त गॉव 'जय शिवाजी महाराज !' कहकर कार्य मे जुट गया ।

प्रात काल होने से पूर्व ही यवन दल तेजी से घाटी मे घुसा । तानाजी पीछे धावा मारते आ रहे है, यह वे जानते थे । घाटी पार करने पर वे सुरक्षित रहेंगे, इसका उन्हे विश्वास था । परन्तु एकबारगी ही आगे बढती हुई सेना की गति रुक गई । बडी गडबडी फैली । कहा क्या हुआ, यह किसीने नही जाना । परन्तु घाटी का द्वार भारी-भारी पत्थरो और बडे-बडे वृक्षो को काटकर बन्द कर दिया गया था । उसके बाहर खडे ग्रामवासी और सवार दरारो के द्वारा तीर छोड रहे थे ।

सारी यवन सेना मे गडबडी फैल गई । यवन सेनापति ने पीछे लौटने की आज्ञा दी, परन्तु अरे ! यहाँ तानाजी की सेना मुस्तैदी से खडी तीर फेंक रही थी । अब एक और भारी विपत्ति आई । ऊपर से अगणित बाणो की वर्षा होने लगी, और भारी-भारी पत्थर लुढकने लगे । घोडे, खच्चर, सिपाही सभी चकनाचूर होने लगे । भयानक चीत्कार मच गया । मुहाने पर दो-चार सिपाही आकर युद्ध करके कट गिरते थे । लाशो का ढेर हो रहा था ।

यवन सेनापति ने देखा, प्राण बचने का कोई मार्ग नही । सहस्रो सिपाही मर चुके थे । जो थे, वे क्षण-क्षण पर मर रहे थे । उसने तानाजी से कहला भेजा, "ख़ज़ाना ले लीजिए, और हमारी जान बख्श दीजिए ।"

तानाजी ने हँसकर कहा—"जान बख्श दी जायगी, पर ख़ज़ाना, हथियार और घोडे तीनो चीज़े देनी होगी ।"

विवश यही किया गया ।

एक-एक मुगल सिपाही आता, घोडा और हथियार रखकर एक ओर चल देता । ग्रामवासियो ने मार बन्द कर दी थी । बहुत कम

यवन सैनिक प्राण बचा सके। घोड़े, शस्त्र और खजाना तानाजी ने कब्जे मे कर लिया। सूर्य की लाल-लाल किरणें पूर्व मे उदय हुई। तानाजी ने देखा, दूर से गर्द का पर्वत उड़ा आता है। उन्होंने सभी गामवासियो को एकत्र करके कहा—"सावधान रहो, महाराज आ रहे है।"

महाराज ने घोड़े से उतरकर तानाजी को गले से लगा लिया। ग्रामवासियो ने महाराज की पूजा की, और लूटा हुआ सभी माल लेकर शिवाजी अपने किले मे लौटे। इस प्रकार सयोग, प्रारब्ध और उद्योग ने सोलह प्रहर के अन्तर मे ही असहाय शिवाजी को सर्वसाधन-सम्पन्न बना दिया, जिसके बल पर वे अपना महाराज्य कायम कर सके।

१६

शाहजी अन्धे कुए मे

शाही खजाना लूटकर शिवाजी ने चढ़ी रकाब कगोरी, टोगटकोट, भोरपा, कादरी और लोहगढ को भी कब्जे मे कर लिया। और कोकण-प्रदेश को लूटकर अपरिमित सम्पत्ति जमा कर ली। कल्याण पर चढ़ाई करके मुल्ला अहमद को कैद कर लिया। इससे इस इलाके के सब किले शिवाजी के हाथ आ गए। शिवाजी ने मालूजी सोनदेव को इस नये इलाके का सूबेदार नियत कर दिया। मालगुजारी का प्रबन्ध प्राचीन रीति पर आरम्भ किया, मन्दिरो की जो सम्पत्ति मुसलमानों द्वारा जब्त कर ली गई थी, वह फिर मन्दिरो को दे दी गई। कई मोर्चो पर नये किले बनाए गए।

इन सब खबरो को सुनकर आदिलशाह तिलमिला उठा। इस समय शाहजी कर्नाटक मे बड़े जोरो से युद्ध कर रहे थे। उसने तत्काल

उन्हे कैद करने और उनकी सब सम्पत्ति जब्त करने की आज्ञा दे दी। परन्तु शाहजी को कैद करना आसान काम न था। अत उसने अपने विश्वस्त अनुचरो को भेजा कि वे किसी तरह युक्ति से उन्हे कैद कर ले। इन व्यक्तियो मे एक बाजी घोरपाडे था। उसने शाहजी को दावत का निमन्त्रण देकर अपने घर बुला लिया, और कैद कर लिया। तथा रातो-रात पैरो मे बेडी डालकर हथिनी के बन्द हौदे पर बीजापुर रवाना कर दिया।

बादशाह ने उनकी बडी लानत-मलामत की और डराया-धमकाया। परन्तु शाहजी ने कहा—"मुझे शिवाजी के सम्बन्ध मे कुछ भी ज्ञात नही है, न मेरा कोई शिवाजी से सम्बन्ध ही है। वह जैसा आपसे बागी है, वैसा ही मुझसे भी बागी है।"

लेकिन आदिलशाह ने एक न सुनी। वह क्रोध से अन्धा हो रहा था। उसने हुक्म दिया कि शाहजी को एक अन्धे कुए मे डाल दिया जाय। और एक सूराख को छोडकर उसका मुह भी चिन दिया जाय। शिवाजी यदि अब भी अपनी हरकते बन्द न करेगा तो वह सूराख भी बन्द कर दिया जायगा और शाहजी को जिन्दा दफन कर दिया जायगा।

यह समाचार शिवाजी को मिला तो उन्हे बडी चिन्ता हुई। एक तरफ पिता के प्राणो की रक्षा थी और दूसरी तरफ स्वतन्त्रता की बरसो की कमाई थी जिसपर अब फल आने वाला था।

परन्तु शिवाजी की बुद्धि कठिनाई मे बहुत काम करती थी। उन्होंने अपने मुत्सद्दियो से सोच-विचार करके शाहजहा से सम्पर्क स्थापित किया। उन्होने अपने मन्त्री रघुनाथ पन्त को औरगाबाद शाहजादा मुराद की सेवा में प्रस्ताव लेकर भेजा। रघुनाथ पन्त ने सक्षेप से अपना अभिप्राय कह सुनाया तथा शाहजी के छुटकारे की प्रार्थना की। मुराद राजनीति मे अदूरदर्शी और कमअक्ल आदमी था। इस समय औरगजेब काबुल और मुलतान का सूबेदार था और मुरादबख्श दक्षिण का। बादशाह शाहजहा पर इस समय फारस का बडा दबाव पड़ रहा था।

फारस के शाह अब्बास ने एक बडी सेना लेकर कन्धार पर आक्रमण किया हुआ था और औरगज़ेब की करारी हार हो रही थी। इसलिए बादशाह का सारा ध्यान उधर ही लगा हुआ था। शाही खजाने का बारह करोड रुपया इस मुहिम मे खर्च हो चुका था।

शिवाजी के दूत रघुनाथ पन्त ने औरगाबाद आकर मुरादबख्श की चौखट चूमी। सब हाल सुनकर मुराद ने तनिक भी गम्भीरता प्रकट न की। उसने कहा—"यह शाहजी तो किसी हिन्दू का अजीबो-गरीब नाम है।"

"खुदाबन्द, इनके वालिद बुजुर्गवार मालोजी भोसला को जब अर्से तक औलाद न हुई तो उनकी बीवी दीपाबाई ने बहुत दान-पुण्य किया और मालोजी ने शाह शरीफ की जियारत भी की। उन्हीकी दुआ से उनको दो बेटे हुए जिनके नाम शाहजी व शरीफजी रखे गए।"

"खैर, तो यह खानदान शाह साहब की दुआ से चला है।"

"जी हा खुदाबन्द ! खुद शाह साहब भी एक फकीर आदमी हैं।"

"तो यह फकीर हमारे हुजूर से क्या मागता है ?"

"महज कैद से रिहाई।"

"लेकिन उनकी शाही खिदमात तो कुछ हैं नही ?"

"बजा इर्शाद है साहिबे-आलम, हकीकत यह है कि उन्होने अपने पुराने मालिक निजामशाह का नमक अदा कर दिया। उनके लिए छः साल तक निहायत वफादारी से लडे और अजीम सल्तनत मुगलिया से जबर्दस्त टक्करे ली। यह उनकी बहादुरी, जानिसारी और वफादारी के सुबूत है। अगर हुजूर पसन्द फर्माएँ तो ये सब औसाफ हुजूर के कदमो मे हाज़िर है।"

"लेकिन हमने सुना है कि उसने निज़ामशाही को छोडकर मुगलो की जागीरदारी कुबूल की थी। लेकिन बाद मे बीजापुर आकर हमपर हमला किया। अलावा अज़ी शिवाजी भी बीजापुर से बगावत कर रहा है।"

"पनाह आलम, शिवाजी न बीजापुर के नौकर हैं, न जागीरदार। शाह ने उनकी हर तरह दिलजोई की, मगर उन्होने शाही खिदमत पसन्द नही की। रही शाहजी की बात, वह अर्ज़ करता हूँ कि जब निजामशाही डूब रही थी, तब उन्होने मुगलो की जेर हुकूमत न आकर अपनी जागीर बचाई। और बाद मे भी निजामशाह ने ही उनकी जागीर मे दस्तन्दराजी की। फिर भी वे बीजापुर से मदद लेकर अपने पुराने मालिक निजामशाही को बचाने की जी-जान से कोशिश करते रहे। अब शिवाजी जो कुछ कर रहे हैं, डके की चोट कर रहे है। उनसे कुछ न कहकर अपने वफादार शाहजी को महज शक पर कैद रखना कहा तक इन्साफ समझा जा सकता है! उन्हे अन्धे कुए मे डाला जा चुका है और अब हुजूर की नजर नेक न हुई तो ऐसा एक बहादुर कुत्ते की मौत मर जायगा जो दयानतदार और जानिसार खादिमो का सरताज है।"

"खैर, तो यदि हमारी सरकार उसे कुछ इमदाद फरमाए तो वह सल्तनत का क्या फायदा करेगा?"

"साहिबे-आलम, शाहजी राजे-कर्नाटक के बादशाह हैं। कोई माई का लाल उनका मुकाबिला करने वाला दक्षिण मे नही है। अब अगर हुजूर की मदद से वह आज़ाद हो जाएँ तो सल्तनत बीजापुर हुजूर के कदमों मे आ गिरेगी। मेरे मालिक शिवाजी ने अकेले ही अपना राज्य खडा किया है। अब मगर सल्तनत मुगलिया का सहारा होगा तो बस बीजापुर शहशाहे मुगलिया का एक सूबा बना-बनाया है।"

मुराद पर रघुनाथ पन्त की बातो का गहरा प्रभाव पडा। शाहजहाँ बहुत दिन से दक्षिण मे पाव फैलाना चाहता था। उसने शिवाजी की प्रार्थना स्वीकार कर ली। मुरादबख्श ने शाहजी राजा के नाम परवाना शाही जारी कर दिया कि वे सल्तनत मुगलिया के सरदार मुकर्रिर फरमाए गए हैं तथा उनके बेटे शम्भाजी को पजहजारी का मनसब अता किया जाता है।

यह परवाना पहुँचते ही बीजापुर को झख मारकर शाहजी को छोड

देना पडा । साथ ही शाहजी के पास सीधा एक शाही रुक्का पहुंचा कि तुम्हारे सब कुसूर माफ किए गए और तुम्हे हमारे हुजूर मे गुलाम खास का रुतबा दिया गया है । बस, तुम हमारी ओर से बीजापुर दरबार मे ही अभी रहो ।

१७

जावली-विजय

सतारा जिले के उत्तर-पश्चिमी कोने के बिलकुल छोर पर जावली नाम का एक गाव था, जो उन दिनो एक बडे राज्य का केन्द्र था । उस राज्य का स्वामी चन्द्रराव मोरे एक मराठा सरदार था, और उसके अधीन कोई १२०० पैदल सिपाही थे—जो वीर पहाडी जाति के थे । अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण यह राज्य दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम की दिशा मे शिवाजी की महत्त्वाकाक्षा मे एक बाधा थी ।

शाहजी के मामले से अली आदिलशाह भीतर ही भीतर घुटकर रह गया । अब वह न शिवाजी का कुछ बिगाड सकता था, न शाहजी का । परन्तु वह शिवाजी से अब और भी चौकन्ना हो गया और वह उन्हे गिरफ्तार करने या मरवा डालने का षड्यन्त्र रचने लगा । शिवाजी को जीता या मरा लाकर शाह के हुजूर मे पेश करने का बीडा एक मराठा सरदार ने उठाया । इस सरदार का नाम बाजी शामराव था । वह छद्म-वेश मे अपने आदमियो के साथ शिवाजी की घात मे रहने लगा । परन्तु शिवाजी को उसकी खबर लग गई और उन्होंने उसपर आक्रमण कर दिया । पर वह बचकर जगलो मे भाग निकला । जावली के राजा चन्द्र-राव ने उसे भाग जाने मे मदद दी । जावली का राजा अत्यन्त चापलूस, स्वार्थी और नीचाशय था । वह गुप्त रूप मे बाजी शामराव के षड्यन्त्र मे भी सम्मिलित था । चन्द्रराव मोरे अपने को उच्चवशज और भोसले

को नीच समझता था । वह आदिलशाह का सामन्त भी था । अत: उसे प्रसन्न करने के विचार से ही उसने शामराव को मदद की थी ।

अब शिवाजी स्वय जावली जा धमके । उन्होने चन्द्रराव के सामने दो शर्ते रखी, या तो लडो या अधीनता स्वीकार करो । शिवाजी ने अपने ताबेदार राघोवल्लाल अत्रे व शम्भाजी कावजी नामक दूत उसके पास भेजे, पर उसने दूतो का अपमान किया । बात ही बात मे बात बढ गई और राघो ने अकस्मात् ही चन्द्रराव के कलेजे मे कटार घोप दी, चन्द्रराव मारा गया । इस प्रकार अचानक चन्द्रराव के मारे जाने से तहलका मच गया और जब तक जावली के सिपाही तैयार हो, सकेत पाकर शिवाजी बाज की भाँति टूट पडे और छ घण्टे की कठिन मारकाट के बाद जावली पर शिवाजी का अधिकार हो गया । मोरेवश का चिरकाल से सचित खज़ाना शिवाजी के हाथ लगा । जिससे उन्होने प्रतापगढ का नया प्रसिद्ध किला बनवाया । जावली का इलाका शिवाजी के राज्य मे मिला लिया गया । अब शिवाजी ने बीजापुर दरबार के कपट का भी जवाब दिया । कोकण के समुद्र तट से लगभग बीस मील दूर एक छोटा-सा द्वीप था जिसे जजीरा कहते थे । मलिक अम्बर ने उसे अपनी समुद्री शक्ति के सगठन का केन्द्र बनाया था । पर अब वह बीजापुर के ताबे था । शिवाजी के राजगढ से वह पास ही था । उन्होने इस स्थान का सामरिक महत्व समझकर अपने सेनापति पेशवा शामराव नीलकण्ठ को एक बडी सेना देकर भेजा, पर वहा के किलेदार फतहखॉं ने उसे खदेड दिया । तब उन्होने राघोवल्लाल अत्रे को वहाँ रवाना किया ।

१८

दक्षिण की राजनैतिक स्थिति

सोलहवी शताब्दी के प्रथम चरण मे महान बहमनी राजवश का अन्त

हुआ। आदिलशाह और निजामशाह उसके उत्तराधिकारी बने। गुलबर्गा के सुलतानो द्वारा आरम्भ की गई इस्लामी राज्य की परम्पराओ का अहमदनगर और बीजापुर के केन्द्रो से पालन होने लगा। परन्तु सत्रहवी शताब्दी के पहले चरण मे ही निजामशाही की सदैव के लिए समाप्ति हो गई और दक्षिण मे अब तक जो मुसलमानी राज्यो का नेतृत्व अहमदनगर से होता था, उसका भार बीजापुर पर आ पडा। परन्तु इसी समय दक्षिण मे मुगलो ने पदार्पण किया। सत्रहवी शताब्दी के दक्षिण भारतीय इतिहास की यह महत्त्वपूर्ण घटना थी। सोलहवी शताब्दी के द्वितीय चरण मे ही यद्यपि मुगल साम्राज्य की दक्षिणी सीमा निर्धारित हो चुकी थी पर अब बीजापुर का दक्षिण मे अकेला डका बज रहा था। इस समय वह अपनी उन्नति की चरम सीमा पर था और उसका राज्य भारतीय प्रायद्वीप के दोनो समुद्री तटो तक फैल गया था, तथा उसकी राजधानी कला, साहित्य, धर्म और विज्ञान की उन्नति का केन्द्र बन गई थी। परन्तु इस राज्य के सस्थापक योद्धा सुलतानो का उत्तराधिकारी अब युद्धभूमि और घोडे की सवारी से मुह मोडकर दरबारी शान और अन्त - पुर के विलास मे डूब चुका था, और इसका परिणाम यह हुआ था कि आदिलशाही सुलतान की मृत्यु के बाद दक्षिण की अवशिष्ट मुसलमानी रियासते तेजी से मुगल साम्राज्य के अधीन होती चली जा रही थी। इसी समय दक्षिण भारत की राजनीति मे मराठो का उदय होने से वहा की राजनीति मे अतर्कित उलट-फेर हुए। मराठे चिरकाल से दक्षिण भारत मे रहते आ रहे थे और शताब्दियो से अपनी ही जन्मभूमि मे विदेशी मुस्लिम शासको की प्रजा बने हुए थे। न तो उनका कोई राजनैतिक सगठन ही था, न उन्हे कोई अधिकार ही प्राप्त थे। इन बिखरे हुए मराठो को सगठित कर एक जाति मे परिणत करके उन्हे मुगल साम्राज्य पर चोट करने की योग्यता औरगजेब के प्रतिद्वन्द्वी शिवाजी ने प्रदान की।

सोलहवी शताब्दी के अन्तिम चरण मे सम्राट् अकबर ने विन्ध्या-

चल से आगे कदम रखकर दक्षिण की ओर रुख किया था। उसके बाद बीजापुर और गोलकुण्डा के राज्यो पर निरन्तर आघात होते रहे। और उनका अस्तित्व मिटाकर उन्हे मुगल साम्राज्य मे मिलाने के लिए बडे-बडे प्रयत्न हुए और अन्त मे अन्तिम कुतुबशाही की राजधानी गोलकुण्डा मे औरगज़ेब ने विजयी के रूप मे प्रवेश किया। अब यह शिवाजी की अनोखी प्रतिभा और कूटनीति थी कि उन्होने दक्षिण के इन राज्यो से मित्रता का सगठन करके मुगल साम्राज्य की दक्षिणी सीमाओ पर आघात करना आरम्भ किया और उधर मुगल साम्राज्य मराठो से डर कर बीजापुर और गोलकुण्डा के सामने मैत्री का हाथ फैलाने को बाध्य हुआ। मुगलो के भय से गोलकुण्डा का सुलतान भी शिवाजी से जा मिला, परन्तु बीजापुर ने सन्देह के वातावरण मे शिवाजी की मित्रता स्वीकार की, बाद मे जब बीजापुर पर मुगलो के निरन्तर आक्रमण होने लगे तो आदिलशाह निरुपाय हो शिवाजी के साए मे आ खडा हुआ। परन्तु बीजापुर की यह मित्रता जल्दी ही समाप्त हो गई क्योकि इस समय शिवाजी उसके किलो और प्रदेशो को हडप करने जा रहे थे। बीजापुर की हालत दिन पर दिन निराशा पूर्ण होती चली जा रही थी। आदिलशाह द्वितीय शराब पीते-पीते मर गया, और नाबालिग सुलतान सिकन्दर के गद्दी पर बैठने पर वजारत की मसनद हथियाने को परस्पर झगडे होने लगे और शासन एकबारगी डगमगा गया। इस प्रकार स्वतन्त्र शक्ति के रूप में शिवाजी को उत्थान का अवसर मिला। शिवाजी मुगल प्रदेशो पर अधिकार करने का कोई भी मौका नहीं चूके। दिल्ली के मुगल बादशाहो की सधि की शर्तों पर उन्हे तनिक भी विश्वास न था। शिवाजी बीजापुर की हानि करके ही अपना राज्य बढा सकते थे। परन्तु बाद मे उन्होने आदिलशाही मन्त्रियो से समझौता कर लिया और अब उनकी सारी शक्ति मुगल साम्राज्य के विरोध मे जुट गई।

१६

सह्याद्रि की चट्टानें

महाराष्ट्र का उत्थान ऐसी उग्रता से प्रचण्ड अग्निशिखा के समान हुआ कि उसने मुगल साम्राज्य को भस्म ही कर दिया। वास्तव मे सह्याद्रि की यह दावाग्नि शताब्दियो से गहराई मे दबी हुई थी। मुगल साम्राज्य पर सिखो के, राजपूतो के, बुन्देलो के, जाटो के और दूसरी सत्ताओ के जो धक्के लगे, वे तो मुगल साम्राज्य की दीवारो को केवल हिलाकर ही रह गए, किन्तु सह्याद्रि की ज्वाला ने मुगल तख्त को भस्म ही कर दिया। महाराष्ट्र की भूमि का पश्चिमी भाग बहुत रूखा है, वहाँ के निवासियो को पेट भरने के लिए बहुत मेहनत करनी पडती थी, वे गगा और यमुना के किनारो पर रहने वाले लोगो की तरह हल जोत-कर आसानी से अन्न न उपजा सकते थे। उन दिनो महाराष्ट्र की आबादी छोटी थी, न बडे शहर थे न मालदार मडियाँ। लोग या तो खेती करते थे या फौज मे भर्ती होकर लडते थे। इस प्रकार प्रकृति ने उन्हे परि-श्रमी और कष्ट-सहिष्णु बना दिया था।

दक्षिण निवासियो की स्वाधीनता की रक्षा कुछ प्राकृतिक कारणो से भी होती रही। भारत पर मुसलमानो का आक्रमण उत्तर के पर्वतो से हुआ। इसलिए आक्रमणकारियो का सबसे अधिक प्रभाव पजाब पर पडा और मध्य प्रदेशो तक उनका वेग कायम रहा। परन्तु दक्षिण पहुँचते-पहुँचते यह वेग निर्बल हो गया, इसीसे जब उत्तर भारत मे मुगल साम्राज्य का प्रताप तप रहा था, तब भी दक्षिण मे विजयनगरम् जैसा जबरदस्त साम्राज्य प्रदीप्त था। मुसलमान विजेता दक्षिण मे शताब्दियो तक स्थायी रूप से पाँव न जमा सके। और जब दक्षिण मे मुसलमानो की छोटी-छोटी रियासतें कायम हो गईं तो उन्होने उत्तर भारत की तरह वहाँ के हिन्दू निवासियो की आत्मा को नही कुचला।

वे तो उनके सहारे पर ही जीवित रहती रही। बीजापुर, गोलकुण्डा या अहमदनगर के शासको को अपनी शक्ति कायम रखने के लिए मराठा सरदारो और मराठा सिपाहियो मे सहायता लेनी पडती थी और यही कारण था कि दक्षिण मे मुसलमानी राज्य की जडे गहराई तक नहीं गई और उनका प्रजा की अन्तरात्मा पर कोई प्रभाव नही पडा।

कठोर भूमि पर रहने के कारण मराठो के चरित्र मे जो विशेषताएँ पैदा हुई, उनमे स्वाधीनता की भावना, निर्भयता, सादगी और शारीरिक स्फूर्ति महत्त्वपूर्ण थी। महाराष्ट्रियो के धार्मिक विचारो पर भी सादगी का असर था। उत्तर भारत के हिन्दू जात-पात के बन्धन मे फसे थे, धर्म पर ब्राह्मणो की ठेकेदारी थी, देश की रक्षा करना केवल क्षत्रियो का काम समझा जाता था, परन्तु महाराष्ट्र मे ऐसा न था। वहा एक राष्ट्र-धर्म राष्ट्रीय एकता के बीच पनप रहा था जिसे आगे धर्म और नीति के सुधारक जनो ने पल्लवित किया। उस युग के महाराष्ट्रीय सुधारको मे सबसे प्रथम हम ज्ञानदेव का नाम लेगे। उनका जन्म उस समय हुआ जब देवगिरि के यादवो का दक्षिण मे भाग्य-सूर्य मध्याकाश मे था। उस समय से लेकर शिवाजी के जन्म-काल तक ५०० वर्षों मे लगभग ५० ऐसे भक्त और सन्त पैदा हुए जिन्होने जनता मे वह विचार-क्रान्ति पैदा की और जिसके फलस्वरूप शिवाजी अपना महाराज्य स्थापित कर सके। चाददेव, ज्ञानदेव, निवृत्ति, मुक्ताबाई, अकाबाई, तुकाराम, नामदेव, एकनाथ, रामदास, शेख मुहम्मद, दामाजी, भानुदास, कूर्मदास, बोधले बाबा, सन्तोबा पोवार, केशव स्वामी, जयराम स्वामी, नरहरि सुनार, सावता माली, जनार्दन पन्त आदि-आदि सन्त उसी समय हुए। इनमे कुछ ब्राह्मण थे, कुछ स्त्रिया थी, कुछ मुसलमान से हिन्दू बने हुए थे, बाकी कुनबी, दरजी, माली, कुम्हार, सुनार, वेश्या, महार-चाडाल तक शामिल थे। इन्होने हरिनाम की महिमा गान करके भक्ति-मार्ग का उपदेश दिया। लोगो ने यह नही देखा कि कौन गा रहा है। जात-पात की उतनी महिमा न रही जतनी हरिनाम और और श्रेष्ठ कर्म की। उन्होंने

महाराष्ट्र की लोकभाषा मे ग्रन्थ लिखे, कविताएँ की, गीत सुनाए और उसका यह परिणाम हुआ कि महाराष्ट्र मे उदार सार्वजनिक धर्म की बुनियाद पडी और महाराष्ट्र मे एक सत्ता का उदय हुआ। महाराष्ट्र की एकता को पढरपुर के देवमन्दिर और उससे सबधित यात्राओ से भी बहुत लाभ पहुँचा। यह पवित्र स्थान महाराष्ट्र का सबसे बडा तीर्थ-स्थान था।

ज्ञानदेव से लेकर रामदास तक जितने सन्त हुए, उन्होंने पढरपुर को अपनी भक्ति का केन्द्र बनाया। हजारो पतित और अछूत समझे जाने वाले हरिजन पढरपुर पहुँचकर पवित्र हो गए और पूज्य बन गए। इस प्रकार इन भक्तो एव सन्तो ने लोकभाषा मे कविताएँ बनाई और उपदेश दिए। वही लोक-भाषा अन्तत समूचे महाराष्ट्र की मराठी बन गई और उनके अन्दर एकता के भाव जाग्रत हुए। एक भाषा, एक धार्मिक प्रवृत्ति और एक-से सामाजिक सस्कारो से मिलकर महाराष्ट्र मे उस राज्य-क्राति का उदय हुआ, जिसने मुगल तख्त की कब्र ही खोद दी।

मराठे बडे कष्ट-सहिष्णु थे। प्रकृति ने उन्हे बलिष्ठ और सहिष्णु बनाया था। यहा के प्राकृतिक टेढे-मेढे और सकुचित पर्वतीय मार्गों ने उन्हे गुरिल्ला युद्ध मे सिद्धहस्त कर दिया था। वे बिजली की तरह अपने असावधान शत्रुओ पर टूट पडते और उनके सावधान होने से प्रथम ही उन्हे लूटपाट कर सह्याद्रि की कन्दराओ मे लोप हो जाते थे। अपने छोटे-छोटे टट्टुओ पर सवार भुने चने या मक्का के दानो पर ही निर्वाह करके शत्रु से निरन्तर युद्ध कर सकते थे। बीजापुर और गोलण्कुडा की सेना के साथ रहकर उन्होने उच्च श्रेणी की युद्धकला मे प्रवीणता प्राप्त की थी।

२०

मुगल साम्राज्य की कब्र

शताब्दियो तक इस्लामी राज्य का तूफान सह्याद्रि की चट्टानो से टकराकर विफल मनोरथ वापस लौटता रहा, यदि किसीको कुछ सफलता मिली भी तो वह चिरस्थायी न रही। मुगलो के लिए तो दक्षिण एक मृगतृष्णा ही बना रहा। अकबर से लेकर औरगजेब तक सब बादशाहो ने दक्षिण पर ललचाई दृष्टि डाली, किन्तु विफलता ही प्राप्त हुई। जो यत्किंचित् सफलता प्राप्त हुई भी उसने मुगल साम्राज्य को ऐसे जाल मे फासा कि अन्त मे दक्षिण ही मुगल साम्राज्य की कब्र बन गया।

सबसे पहले दक्षिण मे कदम रखने का साहस अलाउद्दीन खिलजी ने किया और घोखा देकर देवगिरि के राजा रामदेव को मारकर देवगिरि को दौलताबाद बनाया। यह दक्षिण मे मुसलमानी राज्य की बुनियाद थी। अलाउद्दीन के सेनापति मलिक काफूर ने वारगल और द्वारसमुद्र तक धावे किए और मैसूर तक का प्रदेश जीत लिया। परन्तु उसका यह राज्य-विस्तार अस्थायी और कमजोर ही रहा। उसके बाद मुहम्मद तुगलक दिल्ली की गद्दी पर बैठा और उसके दिल मे यह सनक समाई कि दिल्ली के स्थान पर दक्षिण को ही केन्द्र बनाया जाय और दौलताबाद को राजधानी बनाया जाय। यह एक विचित्र, सनकी और ज़िद्दी आदमी था, उसने दिल्ली शहर के सब रईसो, अहलकारो और दूकानदारो को दौलताबाद मे जा बसने का हुक्म दिया। शहर का शहर उठकर चल पडा, परन्तु लाखो आदमियो के ठहरने योग्य न सराय की व्यवस्था थी, न खाने के अनाज की, और न स्वास्थ्य-रक्षा का ही ठीक प्रबन्ध था। परिणाम यह हुआ कि हजारो आदमी रास्ते मे मर गए और जो दौलताबाद तक पहुँचे, वे ऐसे दुर्दशाग्रस्त हो गए कि वे किसी शहर को बसाने के योग्य न थे। इस प्रकार दिल्ली उजड गई लेकिन दौलताबाद

आबाद न हुआ। अब उसने सबको दौलताबाद से दिल्ली वापस जाने का हुक्म दिया। अब प्रजा पर ऐसी दुहरी मार पडी कि भूख, गर्मी-सर्दी और यात्रा के कष्टो से बचकर बहुत कम लोग दिल्ली पहुँचे। खब्ती और सनकी बादशाह की मूर्खता से हजारो घर बर्बाद हो गए, राजधानी उजड गई और मुहम्मद तुगलक को भी विपत्तियो के समुद्र मे डुबकिया लगानी पड़ी। इसी समय तैमूरलग ने आधी की तरह भारत मे प्रवेश किया। उसने पेशावर से दिल्ली तक मस्त हाथी की तरह भारतवर्ष को पददलित किया, जिसे देखा लूटा और कत्ल किया, अन्त मे सब कुछ आग के सुपुर्द कर दिया। दिल्ली उसके सिपाहियो की तलवार और आग से तबाह हो गई, और ये डाकू बर्बाद शहर तथा उजडे हुए घरो को विधवाओ और अनाथो के हाहाकार से भरकर एव फूट और महामारी के अर्पण करके वापस लौट गया। उसके बाद महीनो दिल्ली बिना बादशाह के रही। बाद मे लोदी वश ने गद्दी को सभाला, परन्तु उसका शासन दिल्ली के घेरे से अधिक दूर तक नही था। आसपास के प्रान्तो ने दिल्ली की अधीनता का जुआ उतार फेका। दक्षिण मे तीन सशक्त राज्यो की स्थापना हुई—एक तैलगाना राज्य, दूसरा विजयनगर साम्राज्य, तीसरा बहमनी मुस्लिम राज्य। कालान्तर में बहमनी राज्य चार हिस्सो मे बट गया—आदिलशाही बीजापुर मे, निजामशाही अहमदनगर मे, कुतुबशाही गोलकुण्डा में और इमामशाही बरार मे एलिचपुर के निकट।

जिस समय का उल्लेख इस उपन्यास मे है, विजयनगर और तैलंगाना के राज्य मुसलमानी रियासतो मे मिल चुके थे। अकबर और जहागीर ने बहुत चाहा कि वे काश्मीर से कन्याकुमारी तक मुगल साम्राज्य का विस्तार करे परन्तु उन्हे आशिक सफलता ही प्राप्त हुई। केवल बरार और खानदेश ही उनके हाथ लग पाए। अहमदनगर के बादशाहो के साथ मुगलो के सघर्ष सन् १६३५ तक जारी रहे, इसी प्रकार बीजापुर के साथ भी मुगलो का सघर्ष रहा। परन्तु विशेष लाभ न

हुआ। शाहजहा ने जब बीजापुर का मर्दन करने के लिए स्वय दक्षिण की यात्रा की, तब कही उसे यत्किंचित् सफलता मिली।

२१
औरंगज़ेब और शिवाजी

औरंगज़ेब एक बड़े ही विचित्र चरित्र का पुरुष था। उसके गुण और दोष महान थे। औरंगज़ेब का व्यक्तित्व इस्लाम के इतिहास पर अपना सिक्का छोड गया है। वह देखने मे सुन्दर न था, लेकिन शरीर उसका गठीला था, युद्ध और व्यायाम का उसे शौक था। पढने-लिखने मे उसकी विशेष रुचि न थी, लेकिन बुद्धि उसकी खूब प्रखर थी। अरबी और फारसी बोलने मे वह बडा दक्ष था। हिन्दी और तुर्की भी वह जानता था। परन्तु उसकी विशेष अभिरुचि इस्लाम के मजहबी साहित्य की ओर थी। कुरान और हदीस उसे कण्ठाग्र थे। ललित कलाओ से उसे घृणा थी। सगीत और चित्रकारी को वह कुफ्र कहता था। वह एक निडर और साहसी पुरुष था। परिस्थितियो ने उसकी निडरता व साहस को और भी बढा दिया था। वह कट्टर मुसलमान था। उसकी कट्टरता दिन पर दिन बढती ही गई। अन्त मे यह कट्टरता उसपर इतनी छा गई कि उसके सब गुण-दोष उससे ढक गए। उसने मुस्लिम धर्मानुशासन को अक्षरशः क्रियात्मक रूप देने की चेष्टा की। नि सन्देह वह रेशमी गद्दो और सगमरमर के फर्शों पर खेला था, परन्तु दक्षिण के कठोर और कटीले मार्ग पर वह बडा हुआ। उसे कधार की बर्फीली व दुर्गम घाटियो में अपना रास्ता निकालना पडा और कदम-कदम पर उसे अपने पैरो पर खडे होने का अभ्यासी होना पडा। जब शासन की गहरी समस्याओ की आग मे उसकी प्रतिभा को तपना पडा तो वह और उज्ज्वल हो उठी। निरन्तर युद्धो मे फंसे रहने के कारण उसका साहस

प्रचण्ड हो उठा। उसने बुन्देलखण्ड, दक्षिण, गुजरात, मुलतान, सिन्ध, बल्ख, कन्धार मे बड़े-बड़े युद्ध किए तथा हर जगह अपनी निराली सूझ-बूझ और अडिग धैर्य का परिचय दिया। उसकी शक्तिया निरन्तर उपयोग मे आकर परिमार्जित और परिवर्धित होती चली गई।

जिन दिनो शाहजी के मामले को लेकर शिवाजी ने मुगलो से सम्पर्क स्थापित किया, और अपनी स्थिति की दृढता मे एक नया दृष्टिकोण प्राप्त किया, उन्ही दिनो मुगल साम्राज्य को पश्चिम मे एक करारी टक्कर लगी। बारह करोड का व्यय और अपार जनशक्ति का क्षय करके भी कन्धार उसके हाथ से निकल गया। इस घटना का जिम्मेदार औरगजेब को ठहराया गया जो उन दिनो काबुल-मुलतान का सूबेदार था। शाहजहाँ ने क्रुद्ध होकर औरगजेब के सब पद और पैन्शन बन्द कर दिए और उसे वापस आगरा बुला लिया। औरगजेब ताव खाकर रह गया। एक तो शत्रु से करारी हार, दूसरे पिता द्वारा यह अपमान, तीसरे दरबार की नजर मे गिर जाना—यह सब बाते ऐसी थी जो औरगजेब की प्रकृति के प्रतिकूल थी। वह अब शाहजहा से घृणा करता था और जहाँ तक सम्भव हो, आगरे से दूर रहना चाहता था। बेगम जहानारा उसकी पीठ पर थी, उसके द्वारा औरगजेब ने सिफारिश कराई और किसी तरह वह सन् १६५३ मे फिर दक्षिण का सूबेदार बन गया। इस बार मुर्शिदकुलीखा भी उसके साथ दक्षिण आया। इस बार दक्षिण आकर वह भूमि-व्यवस्था मे लग गया। मुर्शिदकुलीखा सुयोग्य माल पदाधिकारी था। उससे उसे भारी सहायता मिली। इस प्रकार दक्षिण मे उसने अपनी स्थिति ठीक की और फिर बीजापुर की ओर नजर उठाई। उसने बीजापुर और गोलकुण्डा को पूर्णतया समाप्त कर डालने का पक्का इरादा कर लिया। अब तक ये सुलतान स्वतन्त्र शासक की भाति रहते थे और फारस के शाह को अपना सम्राट् मानते थे। मुगल साम्राज्य मे वे दारा से मिले रहते थे। इसके अतिरिक्त वे शिया थे। औरगजेब अब किसी सुअवसर की ताक मे रहने लगा। उसे वह अवसर

भी शीघ्र ही मिल गया। गोलकुण्डा का मन्त्री मीर जुमला अपने सुलतान से बिगड खडा हुआ और उसने औरगजेब से मिलकर कुतुबशाही का सर्वनाश करने का षड्यन्त्र रचा और उसकी सहायता से औरगजेब ने १६५६ मे गोलकुण्डा पर आक्रमण कर दिया।

बडी सरलता से रियासत विजय हो गई और सुलतान ने एक करोड रुपया नकद और खिराज देकर सन्धि कर ली, तथा ईरान के बादशाह के बदले शाहजहा को अपना सुलतान स्वीकार कर लिया।

इसी समय दस साल रोगी रहकर बीजापुर का सुलतान अली आदिलशाह मर गया। इन दस वर्षों मे उसकी राज्य-व्यवस्था बहुत डावाँडोल हो गई थी। अब ज्यो ही सुलतान के मरने की खबर औरगजेब ने सुनी, उसने बीजापुर की ओर नजर फेरी। उसने कूटनीति का सहारा लिया और कितने ही आदिलशाही सरदारो और अफसरो को घूस देकर अपनी ओर मिला लिया। बीदर और कल्याण के किले उसने हथिया लिए और बीजापुर को जा घेरा।

शिवाजी बडे विलक्षण राजनीतिज्ञ और कूटनीतिक पुरुष थे। वे बडी बारीकी से औरगजेब की गतिविधि का अध्ययन कर रहे थे। इस अवसर पर उन्होंने बीजापुर की सहायता करने की नीति अपनाई और औरगजेब का ध्यान बीजापुर से हटाने के लिए वे बडी तीव्रता से मुगलो की दक्षिण-पश्चिम सीमा पर आक्रमण करने लगे। तीन हजार घुडसवारो को लेकर मानाजी भोंसले ने नीमा नदी को पार किया और मुगलो के चमारगुण्डा ताल्लुके के गावो को लूट लिया। इसी समय उनके दूसरे सेनानायक कासी ने रायसीन ताल्लुका के गावो को लूट डाला और अब ये दोनो हठीले मराठा सरदार लूटपाट और मारकाट करते हुए मुगल साम्राज्य के दक्षिणी सूबे के प्रधान नगर अहमदनगर की चहारदीवारी तक जा पहुचे और वहा लूटमार करके सर्वत्र आतक फैला दिया। जिस समय दक्षिण मे शिवाजी के सेनानायक यह उत्पात मचा रहे थे, ठीक उसी समय शिवाजी उत्तर मे जुन्नर ताल्लुका को धड़ाधड

लूट रहे थे और एक दिन अंधेरी रात मे कमन्द के द्वारा वे जुन्नर शहर की चहारदीवारी को चुपके से फाद गए और वहा के पहरेदारो को मारकर तीन लाख हूण, २०० घोड़े, बहुत-से बहुमूल्य वस्त्र और रत्न लेकर चम्पत हुए। इन उपद्रवो से घबराकर औरगज़ेब ने नसीरीखा की कमान मे तीन हज़ार घुड़सवार देकर अहमदनगर की ओर रवाना किया। उधर लूटमार करते हुए शिवाजी और उनके साथी अहमदनगर तक पहुचे ही थे कि नसीरीखा और मुलतखतखा से उनकी जबरदस्त मुठभेड हुई। अपनी नीति के अनुसार साधारण-सी लडाई करके शिवाजी वहा से भाग खडे हुए और तब मुगल सेना शिवाजी के प्रदेशो मे घुस गई और जवाबी कार्यवाही के तौर पर वहाँ के गावो को उजाडने और मारकाट करने लगी। इसी समय शाहजहाँ ने बीजापुर से सधि कर ली और औरगजेब को बीजापुर से अपना घेरा उठाना पडा।

यह घटनाएँ सन १६५७ के ग्रीष्मकाल की है। परन्तु इसी समय बादशाह शाहजहाँ आगरे मे बीमार पडा। और मुगल सिंहासन के उत्तराधिकार के लिए गृहयुद्ध की घटाएँ छा गई। औरगजेब आगरे की ओर चल दिया। बीजापुर राज्य मे बहुत-से घरेलू झंझट उठ खडे हुए थे, वहाँ के वजीर खान मोहम्मद की हत्या कर दी गई। अब परिस्थितियो ने शिवाजी के सामने का मैदान साफ कर दिया था। उन्होने क्षण-भर भी विलम्ब न करके पश्चिमी घाट को पार किया और कोकण मे जा धमके। बिना ही किसी कठिनाई के कल्याण और भिवडी के समृद्ध शहर उनके हाथ मे आ गए, जहाँ से अथाह धन और अतुल सामग्री उनके हाथ लगी। कल्याण और भिवडी को अपनी जलसेना का प्रमुख बन्दरगाह बनाया और माहुली का किला भी सर कर लिया। तभी खबर आई कि औरगज़ेब ने बूढे शाहजहाँ को कैद करके तथा भाई मुराद और दारा को कत्ल करके आलमगीर के नाम से मुगल तख्त पर आरोहण किया है।

२२

सेर को सवा सेर

मुगलो से सन्धि करके बीजापुर दरबार को जरा साँस लेने की फुरसत मिली। बीजापुर का नया शासक अभी बच्चा ही था। उसकी माँ बडी साहिबा के नाम से सब काम-काज देखती थी। उसने सोचा कि इस अवसर पर अपने इस उठते हुए शत्रु को खत्म कर दिया जाय। शिवाजी को मार डालने का एक षड्यन्त्र विफल हो ही चुका था। इस समय बीजापुर दरबार मे एक उच्च सरदार अब्दुल्ला था—जिसे कर्नाटक के युद्ध मे वीरता दिखाने के उपलक्ष्य मे अफजलखाँ का खिताब मिला था। वह सुलतान का कुछ सम्बन्धी भी था। बडी साहिबा ने उसीको समझा-बुझाकर पाँच हजार सवार तथा सात हजार पैदल सेना देकर शिवाजी की ओर रवाना कर दिया।

अफजलखा ने बडे दर्प से कहा था कि मै इस पहाडी चूहे को अपनी तलवार की नोक पर रखकर ले आऊँगा। वह बडे डील-डौल का आदमी था। इस समय शिवाजी जजीरे के आक्रमण मे फँसे हुए थे। परन्तु अफजल के आने की सूचना पाते ही उन्होने प्रतापगढ की ओर प्रस्थान किया।

अफजलखाँ ने दक्षिण सीमा से शिवाजी के राज्य मे प्रवेश किया। वह जल्द से जल्द पूना पहुचना चाहता था। सबसे प्रथम उसने तुलजा-पुर के किले पर आक्रमण किया, वहाँ का भवानी का मन्दिर भग किया और मन्दिर मे एक गाय का वध किया तथा उसका रुधिर सारे मन्दिर मे छिडका। पुजारी प्रथम ही मूर्ति को लेकर भाग गए थे। शिवाजी ने जब अफजलखाँ की गतिविधि देखी तो राजगढ से जावली मे आकर युद्ध की तैयारी आरम्भ कर दी। अफजलखाँ ने जब देखा कि शिवाजी ने अपना स्थान बदल दिया है तो वह दक्षिणी सीमा को छोड़

पश्चिमी सीमा पर आगे बढा और उसने पढरपुर के आगे भीमा नदी को पार किया। उसने पढरपुर के मन्दिर को भ्रष्ट किया, पुण्डलीक की मूर्ति को नदी मे फेंक दिया और बाई की ओर बढा। वहाँ पहुँचकर उसने शिवाजी के लिए एक लोहे का पिंजरा बनवाया। उसने दर्प से घोषणा की कि इसी पिंजरे मे बन्द कर वह उस पहाडी चूहे को बीजा-पुर ले जायगा।

अफजलखाँ चाहता था कि या तो शिवाजी को सोते हुए किसी किले मे घेर लिया जाय, या मन्दिरो को तोड-फोडकर उसे इतना उत्ते-जित कर दिया जाय कि वह पहाडी इलाके को छोडकर मैदान मे उत्तर आए। उसे भरोसा था कि मैदान मे वह मराठो को गाजर-मूली की भाँति काट डालेगा। परन्तु शिवाजी का प्रबन्ध ऐसा था कि बीजापुर मे पत्ता हिलता था तो शिवाज के कान मे आवाज आ जाती थी।

जब अफज़ल ने देखा कि शिवाजी को न तो किसी किले मे पकडा जा सकता है, न पहाडी इलाके से बाहर ले जाया जा सकता है, तो उसने उन्हे धोखे-से मार डालने या पकडने की योजना बनाई।

मराठे सरदार घबरा रहे थे। अभी तक उन्होने मुसलमानो के साथ सन्मुख युद्ध नही किया था। केवल छोटे-छोटे किलो पर ही आक्रमण किए थे। अफज़लखाँ मशहूर सेनापति था। उनकी सेना सुगठित थी। शिवाजी के सरदारो के दिल दहल रहे थे। और शिवाजी के माथे पर चिन्ता की रेखाएँ उभर रही थीं।

शिवाजी का गुप्तचर विश्वासराव इस समय छद्म वेश मे अफजल की सेना मे था। वह क्षण-क्षण पर सूचनाएँ भेज रहा था।

बाई पहुँचकर अफजलखाँ ने एक पत्र देकर कृष्णजी भास्कर को दूत बनाकर शिवाजी के पास भेजा। पत्र मे लिखा था - "तुम्हारा बाप मेरा दोस्त है। तुम भी मेरे लिए अजनबी नही। बस, बेहतर है मुझसे आकर मिलो। मैं तुम्हें माफी दिलाऊँगा। और वे किले जो कोकण मे अब तुम्हारे कब्जे में हैं, तुम्हे दिलाऊँगा। यदि तुम दरबार

मे जाओगे तो तुम्हारा बडा स्वागत होगा।"

शिवाजी ने भरे दरबार में अफजलखा के दूत कृष्णाजी भास्कर का भारी स्वागत और आवभगत की और बडी नम्रता और अधीनता प्रकट की। यह भी प्रकट किया कि वह बहुत डर गए हैं। उन्होने उसे महल में ही आदरपूर्वक ठहराया। भास्कर पण्डित अपने कार्य मे सफल मनोरथ हो बहुत प्रसन्न हुए।

२३

ब्राह्मण और क्षत्रिय

आधी रात बीत चुकी थी। कृष्णाजी भास्कर सुख की नींद सो रहे थे। एकाएक खटका सुनकर उनकी आख खुली। उन्होने देखा—नगी तलवार हाथ मे लिए शिवाजी सामने खड़े हैं। कृष्णाजी भयभीत होकर शिवाजी की ओर ताकते रहे। उनके मुह से बात न फूटी।

शिवाजी ने कहा—"आपके सोने मे विघ्न पडा न? पर आवश्यकता ही ऐसी आ पडी।"

"लेकिन, आपका अभिप्राय क्या है?"

"अभी बताता हूँ। लेकिन आप शत्रु के दूत हैं, मेरे-आपके बीच यह तलवार रहनी चाहिये।" इतना कहकर उन्होने तलवार आगे बढाकर कृष्णाजी के पैरो के पास जमीन पर रख दी।

कृष्णाजी कुछ आश्वस्त होकर बोले—"आप मुझे शत्रु क्यो समझते हैं?"

"मैं यही जानना चाहता हूँ कि आपको क्या समझू। कहिए, मै कौन हूँ और आप कौन हैं?"

"यह भी कुछ पूछने की बात है। मैं हूँ वाई का कुलकर्णी कृष्णाजी भास्कर। और आप है राजा शाहजी के पुत्र पूना के जागीरदार।"

"यदि मेरी जागीर छिन जाय और आप कुलकर्णी या दीवान न रहे तो ?"

"तो मै कृष्ण भास्कर ब्राह्मण और आप शिवाजी क्षत्रिय ।"

"ठीक कहा आपने । तो ब्राह्मण देवता, ब्राह्मण सदा से क्षत्रियो को सदुपदेश देते आए है । आप भी मुझे सदुपदेश दीजिए । इसीलिए मैं आया हूँ । आपका शिष्य हूँ ।"

"वाह, यह आप क्या कहते हैं !"

"खैर, आप कहिए, आज गो-ब्राह्मण की क्या दशा है ?"

"दोनो सकट मे है ।"

"इस सकट से उनका उद्धार कैसे होगा ?"

"आप जैसे पुरुषसिह ही उनका उद्धार कर सकते है ।"

"मै ही पुरुषसिह क्यो ? इस आदिलशाही मे तो ४० हजार हूणो के जागीरदार बहुत हैं ।"

"सो तो है ही । पर आप जैसा साहस किसमे है !"

"आपने क्या मेरा केवल साहस ही देखा ?"

"नही, कौशल भी, सद्भावना भी, पवित्रता भी ।"

"बस ?"

"और भी, आपमे इन बातो की परख की सामर्थ्य भी है, इसी-से आपका कोई साथी आपको धोखा नही देता । और इसी कारण से आपने जो इतने अल्पकाल मे इतनी विजये की है, किसी दूसरे ने नही की ।"

"परन्तु बीजापुर दरबार मे दम होता तो क्या मै सफलता प्राप्त कर सकता था ?"

"स्वीकार करता हूँ, आदिलशाह जर्जर हो रहा है, शाहजहा के सहारे कुछ दिन चल गई । अब तो औरगजेब बादशाह है । वह इसे कब छोडेगा !"

"और कुतुबशाही के विषय मे आप क्या कहते है ?"

"वह तो बीजापुर से भी गई-बीती है।"

"तो ब्राह्मण देवता, क्या यह बुद्धिमानी की बात नही कि डूबती नाव को छोडकर पृथ्वी पर पैर जमाया जाय। क्या नाव के साथ डूब मरना मूर्खता नही है ?"

"परन्तु आप कहना क्या चाहते है—वह कहिए।"

"मैं तो कहता हूँ कि आपके खाँ साहब डूबती नाव पर सवार है। उन्होने तुलजापुर की भावनी का मन्दिर गोवध करके भ्रष्ट कर दिया। कहिए मेरा ही धर्म गया या आपका भी ?"

"सभीका गया, अनर्थ ही है।"

"तो भूदेव, धर्म की रक्षा कीजिए।"

"मै ब्राह्मण असहाय-अकेला क्या कर सकता हूँ ?"

"आप अकेले क्यो हैं ? यह सेवक आपका शिष्य और यजमान है। आप ब्राह्मण है और मै क्षत्रिय। आप उपदेश दीजिए। यह भवानी की तलवार आपके सामने है। इसे मन्त्रपूत करके मेरे हाथ मे दीजिए। कहिए, धर्म सस्थापनार्थाय विनाशाय च दुष्कृताम्।"

"पर मैं पराया दास हूँ। ऐसा नही कर सकता।"

"तो उतारिए जनेऊ। आप म्लेच्छो के दास है तो ब्राह्मण नहीं रह सकते। म्लेच्छो के इस दास का मैं अभी वध करूँगा। मुझे भवानी का आदेश है।" यह कहकर शिवाजी ने लाल-लाल आँखे करके नंगी तलवार उठा ली।

ब्राह्मण डर गया। उसने कहा—"आप मुझ ब्राह्मण के साथ विश्वासघात करते है—अपना अतिथि बनाकर ?"

"मैंने तो ब्राह्मण के चरणो मे प्रथम ही तलवार रख दी थी। पर आप तो कहते हैं, मैं ब्राह्मण नही हूँ, म्लेच्छ का दास हूँ।"

"परन्तु मैं ब्राह्मण तो हूँ ही।"

"तो दीजिए मुझे धर्मोपदेश, मै आपका शिष्य हूँ।" शिवाजी ने घुटनो के बल बैठकर ब्राह्मण के चरणो मे सिर झुका दिया।

"शिवराज, महाराज उठिए। आपने मुझे धर्म-सकट मे डाल दिया है। किन्तु आप कहिए आप क्या चाहते है। पर यह मत भूलिए कि मैं आदिलशाह का प्रतिष्ठित कुलकर्णी हूँ।"

"क्या मेरे पिता आदिलशाही मे कम प्रतिष्ठित है? उन्होने ही उन्हे आधा राज्य जीत कर दिया है। दस बरस तक जब तक शाह रोग-शय्या पर रहे, मेरे पिता ही की तलवार की धार पर उनका राज्य सुरक्षित रहा।"

"यह सच है महाराज!"

"और आदिलशाही आज मेरा मुह ताकती है। मै यदि आज उस दरबार मे जा खडा होऊँ तो शाही आँखें मेरे तलुए पर आ गिरेगी।"

"निस्सन्देह, फिर भी आप इस सम्मान की ओर नहीं देखते।"

"मैं धर्म की ओर देखता हूँ, कर्तव्य की ओर देखता हूँ, गो-ब्राह्मणो की असहायावस्था की ओर देखता हूँ।"

"आप अलौकिक पुरुष है, महाराज शिवाजी।"

"किन्तु आदिलशाही एक कृष्णजी को पालती है तो डेढ करोड भास्करो को पीडित करनी है कृष्णजी के ही हाथो।"

"मेरे हाथो कैसे?"

"आप किसलिए मेरे पास आए हैं, कहिए तो। इसीलिए न कि मैं चलकर अपना सिर म्लेच्छ को झुकाऊँ और आपकी भाति देश-धर्म की ओर से अन्धा होकर मौज करू?"

"तो मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ?"

"मेरे लिए नही अपने लिए भी नही। धर्म और असहाय करोडो नर-नारियो के लिए कीजिए।"

"क्या करूँ?"

"मुझे उपदेश दीजिए, आदेश दीजिए, कर्तव्य बताइए, पवित्र जनेऊ छूकर, क्या मैं अत्याचार के दमन मे प्रवृत्त होऊँ?"

"ओह, आप तो मुझे स्वामी से विश्वासघात करने को कहते हैं।"

"ब्राह्मण का स्वामी भगवान है। यह सब मनुष्यो का शास्ता है। यह आप ब्राह्मण की भाँति नही बोल रहे है। या तो ब्राह्मण की भाँति मुझे आदेश दीजिए या उतारिए जनेऊ।"

"नही ! मै ब्राह्मणत्व को नही त्याग सकता। सिर कटा सकता हूँ।"

"तो मुझ शिष्य को उपदेश दीजिए, गुरुवर !"

कृष्णजी भास्कर की आँखो से झर-झर आसू बहने लगे। उन्होने जनेऊ छूकर दोनो हाथ उठाकर कहा—"महाराज शिवाजी, गो-ब्राह्मण, प्रजा और धर्म की रक्षा कीजिए। आशीर्वाद देता हूँ, आप सफल हो।"

"तो अपने हाथो से मन्त्रपूत करके यह तलवार मेरी कमर मे बाँधिए।"

भास्कर ने यन्त्रचालित की भाँति मन्त्र पढकर तलवार शिवाजी की कमर मे बाँध दी। शिवाजी ने झुककर ब्राह्मण के चरण छुए। फिर कहा—"अब आप क्या करेगे ? अब भी म्लेच्छ के दास होकर मुझे अपराधी कहकर मेरा गला काटेगे ?"

"ऐसा नराधम मैं नही हूँ। आप जैसे नर-रत्न का जिसने साथ नही दिया, वह पुरुष कैसा ?"

"धन्य है आप कृष्णजी, आपने सब ब्राह्मणो की मर्यादा रख ली। अब गुरु-दक्षिणा मागिए।"

"आप महानुभाव है। देश के करोड़ों जनो पर आपकी नज़र है। मुझे तो यदि हिवरा ग्राम ही मिल जाता तो बहुत था। परन्तु मैं माग नही रहा। एक बात कही।"

"माँगिए तो बेजा क्या है ? तो सुनिए, आप मेरा काम करे या न करे हिवरा ग्राम आपका हो चुका। चलते समय मै आपको ५००० हूण, मोतियो की माला, सोने का कण्ठा, स्वर्ण-पदक, और एक अच्छा अरबी घोड़ा भेट करूँगा। यह भेट बीजापुर राज्य के दीवान कृष्णजी के लिए होगी।"

"इतनी बडी भेट ?"

"मै बहुत डर गया हूँ। इसीसे अफजलखाँ के दीवान को इतनी भारी भेंट दे रहा हूँ।"

"यह गोरखधन्धा मेरी समझ मे नही आया। दरबार मे आपने बीजापुर की अधीनता दीनतापूर्वक स्वीकार की और इस समय ऐसी बाते कही कि मेरा अचल मन भी डिग गया। अब फिर कहते है कि डर गया हूँ।"

"कृष्णाजी, हर बात का प्रयोजन होता है। आप खाँ साहब को समझाइए कि शिवाजी बहुत डर गया है और उसे सब भाँति अधीनता स्वीकार है। हर तरह विश्वास दिलाकर उसे प्रतापगढ के नीचे तक ससैन्य ले आइए। और यही मुझसे मिलाइए।"

"आपका मन्त्र गूढ है। परन्तु आज से मै आपका सेवक हुआ। आपके अभिप्राय से मुझे कुछ प्रयोजन नही है। मैं आपका आज्ञापालन करूँगा।"

"मुझे आप जैसे नैष्ठिक ब्राह्मण से यही आशा थी। अब कृपा कर उधर का हाल भी बता दीजिए।"

"खान आपको जीता या मरा पकडने का बीडा उठाकर यहाँ आया है। और एक पिजरा भी आपको बन्द करके ले जाने के लिए लाया है। उसके साथ ५००० खूखार सवार और ७००० फौज पैंदल तथा तोपखाना है। अब वह बाई मे अपना पडाव डाले पडा है।"

"तो आप उससे कहिए कि मै बाई जाने मे डरता हूँ। मै उससे जावली मे मिलूगा। मैं दो अनुचरो सहित निश्शस्त्र आऊँगा। खान भी दो ही अनुचर साथ रखेगा जिनमे एक आप होगे।"

"खैर, यह प्रबन्ध मैं कर लूगा। पर आपके पास तो काफी सेना है। आप उसे सम्मुख युद्ध मे भी हरा सकते है।"

"शायद खाँ साहब अच्छी शर्तों पर सन्धि कर ले। काहे को व्यर्थ जाने बर्बाद की जाएँ।"

"अब इसकी आशा खान से मत कीजिए।"

"आशा मैं नहीं करता हूँ। केवल बात करता हूँ।"

"तो आप खाँ साहब को निमन्त्रण देने किसे भेजेंगे?"

"गोपीनाथ पन्त को।"

"अच्छा तो मेरी ओर से आप निश्चिन्त रहिए।"

"यह ब्राह्मण का वाक्य भला मैं भूल सकता हूँ! अब आप विश्राम कीजिए।"

इतना कहकर शिवाजी कक्ष से बाहर निकल आए, कृष्णाजी बड़ी देर तक विचारों की उधेड़-बुन में लगे रहे।

२४

अफजल की आशा

कृष्णाजी भास्कर ने लौटकर अफजल को विश्वास दिलाया कि शिवाजी बहुत डर गया है और वह हमारी ही शर्तों पर आत्म-समर्पण करने को राजी है। अब आप ऐसी चतुराई से उसे पकड़िए कि उसे तनिक भी शक न हो। वह बड़ा ही चालाक आदमी है। जरा भी शक हुआ तो उसकी गर्द भी न मिलेगी।

"बस, तो मैं इतना ही चाहता हूँ कि वह पहाड़ी चूहा मेरे पिंजरे में आ फँसे।"

"यह काम तो कल हुआ ही रखा है।"

"लेकिन तुम कहते हो, वह बाई आना नहीं चाहता।"

"वह बहुत डर गया है हुजूर, मेरा खयाल है हमें इसपर जिद न करनी चाहिए—कहीं ऐसा न हो, वह शक करे और भाग जाय।"

"वह भाग जायगा तो मैं उसके एक-एक किले को जमींदोज कर दूंगा।"

"इससे कुछ फायदा नही होगा खॉ साहब, वह हवाई आदमी है। पीठ फेरते ही फिर शैतानी करेगा।"

"खैर, तो तुम्हारी राय है कि मैं उसकी राय मान लू ?"

"मुझे तो कोई हर्ज नजर नही आता। उसका कहना है कि दोनो अपनी-अपनी जगह से आगे बढकर बीच मे मिले।"

"लेकिन कहाँ ?"

"प्रतापगढ और बाई के बीच मे पाटगांव है। गाँव वह अपना ही है। मैने कहा है कि वही जगह ठीक रहेगी। वहां एक ऊँचा मैदान है वही आपका दरबार हो जायगा। हमारी फौजे एक तीर के फासले पर पास ही छिपी रहेगी। जरूरत होते ही वे टूट पडेगी।"

"ओह, इस अकेले पहाडी चूहे के लिए तो मेरी यह तलवार ही काफी है। उसकी मुझे क्या परवाह !"

"अच्छा तो दो आदमी हमारे पास कौन रहेगे ?"

"एक मैं आपका सेवक, दूसरा सैयद बन्दा जिसकी तलवार की बराबरी दकन मे कोई कर सकता है तो हुजूर ही है।"

"तलवार का जौहर तो तुम्हारा भी कम नही है, कृष्णजी ! अब कल उसकी बानगी देखी जायगी।"

"उसकी ज़रूरत ही नही पडेगी, हुजूर ! काम यो ही चुटकियो मे हो जायगा। मैंने उसकी सब शर्तें मजूर करके एक शर्त उससे मजूर करा ली है कि वह खुद बिना हथियार आएगा और उसके साथ जो दो आदमी रहेगे, उनके पास तलवारें तो होगी पर वे दस गज़ के फासले पर रहेगे।"

"उम्दा तजवीज़ है। इन्शा अल्ला, अल्ला काम फतह होगा।"

उन्होने शिवाजी के दूत गोपीनाथ को स्वीकृति देकर वापस भेज दिया।

२५

शिवाजी की तैयारी

जावली के चन्द्रराव मोरे के पास पीढ़ियो का संचित धन था। वह सब जावली के पतन के बाद शिवाजी के हाथ लगा। उस धन से उन्होने प्रतापगढ नाम का दुर्ग बनवाया था। इस दुर्ग का सैनिक महत्त्व बहुत था। दक्षिण के एकदम सिरे पर यह दुर्ग एक महान् मडल को सुरक्षित रखता था, और पश्चिम मे दरह पार के ऊपर दक्षिण से कोकण जाने के मुख्य मार्ग पर था। उत्तर मे सावित्री नदी और पश्चिम मे कामना नदी दुर्ग की खाई का काम दे रही थी। पश्चिम की ओर एक विस्तृत पहाडी मैदान मीलो तक चला गया था जो कोकण से मिल गया था। उसका एक सिरा साठ मील तक बल खाता हुआ समुद्र तट तक जा पहुँचा था। प्रतापगढ एक दुर्गम पर्वत-श्रृग पर पश्चिम मे उत्तरी छोर पर था। किला अत्यन्त मजबूत था। उसके चारो ओर दुहरी पक्की चहारदीवारी थी।

ज्यो ही शिवाजी को अफ़जलखा के आने की सूचना मिली, वे राजगढ के निवास को छोडकर प्रतापगढ मे आ गए थे। और यही वे उस खान से मोर्चा लेना चाहते थे। यहाँ से बाई मे पडी हुई अफजलखाँ की सेना दीख पडती थी।

कृष्णाजी भास्कर को विदा करके शिवाजी एकदम कार्यव्यस्त हो गए थे। इस समय वे एक बडी ही कठिन जोखिमपूर्ण योजना मन ही मन बना चुके थे। उन्होने रात-भर जागकर भवानी की उपासना की। प्रभात मे मन्त्रियो को बुलाकर मन्त्रणा की। उन्होने कहा—"यदि मैं मार डाला जाऊ तो नेताजी पालकर पेशवा की हैसियत से राज्य का भार सम्हालेगे। पुत्र शम्भाजी राज्य का उत्तराधिकारी रहेगा।" इस प्रकार सब प्रकार राज-व्यवस्था से निश्चिन्त हो उन्होने अफजलखा से

भेंट करने की तैयारिया की। सिर पर फौलाद का शिरस्त्राण पहना, ऊपर पगडी बाध ली, सारे शरीर पर जजीरी कवच धारण किया, ऊपर सुनहरी काम का अगरखा पहना, बाये हाथ की चारो उगलियो मे तीव्र व्याघ्रनख नाम का फौलादी अस्त्र और दाहिनी आस्तीन मे बिछुआ छिपा लिया। इस प्रकार आत्मरक्षा और आक्रमण के लिए हर तरह तैयार होकर तथा सेना की गुप्त व्यवस्थाए करके तथा अन्य सकेत सेनानायको को देकर शिवाजी अपने विश्वस्त वीर साथियो सहित खान से भेट करने को प्रतापगढ दुर्ग से चले। चलती बार उन्होने माता जीजाबाई की चरण-धूलि ली और आशीर्वाद मागा। उन्होने कहा—"पुत्र, यह मत भूलना कि यह दैत्य मेरे पुत्र का घाती है, भाई शम्भाजी की मृत्यु का बदला लेना।" इस समय शिवाजी के अगल-बगल जीवाजी महता और शम्भूजी कावजी दो मराठे थे जिनकी जोड का तलवार का धनी उस काल महाराष्ट्र मे न था।

२६

दुश्मन की मुलाकात

अभी तीसरा पहर था। सूरज की किरणे तिरछी हो गई थी। अफजलखा ने एक हजार सिपाहियो सहित ठाट-बाट मे दरबार के लिए प्रस्थान किया। वह पालकी मे सवार था। सैयद बन्दा पालकी के साथ-साथ चल रहा था। दूसरी ओर कृष्णजी भास्कर थे। जब पालकी सामियाने के सामने पहुची तो कृष्णजी ने कहा—"यदि शिवाजी को धोखा देकर कब्जे मे करना है, तो इतनी बडी फौज साथ ले जाना ठीक नही है। उसे यही छिपा देना चाहिए।"

अफजलखा ने घमण्ड मे आकर स्वीकार कर लिया। सेना पीछे छोड दी गई, पर तैयार रहने का हुक्म दे दिया गया। उसे अपने बाह-

बल और आदमी के कद के बराबर लम्बी तलवार का बहुत भरोसा था। फिर सैयद बन्दा परछाई की भाति नगी तलवार लिए उसके पास था। शामियाना बडे ठाट से सजाया गया था। बडे-बडे कीमती कालीन और कारचोबी के मसनद वहा करीने से लगे थे। खान ने देखकर लापरवाही से कहा—'ताज्जुब की बात है कि एक मामूली देहाती जमीदार के पास इस कदर कीमती आसाइश का सामान कहा से आ गया।"

गोपीनाथ पन्त ने नम्रता से कहा—"हुजूर, यह सब सामान बहुत जल्दी हुजूर की हमराह बीजापुर जाएगा। मेरे मालिक ने हुजूर ही के लिए यह मुहय्या किया है।"

"लेकिन तुम्हारा वह गवार मालिक है कहा ?"

"हुक्म हो तो मै आगे जाकर उन्हे हुजूर मे ले आऊ।"

"जरूर जाओ।" कहकर खान ऊची मसनद पर बैठ गया।

थोडी ही देर मे शिवाजी अपने दोनो सेवको सहित वहा जा पहुचे। पर शिवाजी ने खान के पास सैयद बदा को नगी तलवार लिए खडा देखा तो वे वही ठिठककर खडे रह गए और कहला भेजा कि उस आदमी से मुझे बहुत खौफ लग रहा है। मेरी हिम्मत आगे बढने की नही होती। खान को शिवाजी की दुबती-पतली बदसूरत-सी शक्ल और यह बुजदिली देखकर हसी आ गई। उसने उन्हे बिना हथियार खाली हाथ देखकर कहा—"उससे कहो, बेखौफ चला आए।" लेकिन शिवाजी आगे नही बढे। तब खान ने सैयद को जरा दूर खडा कर दिया। शिवाजी ने मच पर ऊपर चढकर सहमते हुए खान को सलाम किया। खान खडा हो गया और दोनो हाथ फैलाकर शिवाजी को गले लगाने को आगे बढा।

शिवाजी का सिर मुश्किल से उसके कन्धो तक आया। खान ने शिवाजी की गर्दन अपने बाये हाथ से दबाकर दाहिने से खजर निकाल उनकी बगल मे घोंप दिया। पलक मारते यह काम हो गया। शिवाजी की गर्दन इतने जोर से उसने दबोच रखी थी कि उनका दम घुटने लगा।

खञ्जर ज़िरहबख़्तर मे लगकर खसक गया। दोनो पक्षो के वीरो के हाथ तलवार की मूठो पर गए। इसी समय खान ज़ोर से चीख उठा। शिवाजी के बाये हाथ के बघनखे ने खान का समूचा पेट चीर डाला था और उसकी आते बाहर निकल आई थी। उसकी पकड भी ढीली पड गई। उसने तलवार निकालनी चाही, पर इसी समय शिवाजी ने उछलकर समूचा बिछुआ उसके कलेजे मे घोप दिया। खान ज़मीन पर गिरकर छटपटाने लगा और 'मार डाला काफिर ने, पकड लो' चिल्लाने लगा। इसी समय सैयद की तलवार का करारा वार शिवाजी के सिर पर पडा। वार से उनका फौलादी झिलमिल टोप कट गया और थोडी चोट भी आई। इसी समय जीवाजी महता ने उछलकर सैयद का तलवार वाला हाथ काट डाला। कटा हाथ तलवार सहित दूर जा गिरा। सैयद चीख-कर जीवाजी पर झपटा। इसी बीच जीवाजी ने उसका सिर भुट्टा-सा उडा दिया। कृष्णजी भास्कर तलवार लेकर गज-वेग से चिल्लाते हुए आगे बढे।

अब शिवाजी ने लपककर सैयद की तलवार उठा ली और कहा—"जाओ, पिता की आज्ञा से ब्राह्मण-बध नही करूँगा।" उधर खान को पालकी मे डालकर पालकी वाले भाग चले। इसपर शम्भूजी कावजी ने तलवार के वार उनकी टागो पर किए। पालकी वाले चीखते-चिल्लाते पालकी छोड भाग चले। शम्भूजी ने खान का सिर तत्काल काटकर शिवाजी के सम्मुख उपस्थित किया। इसी समय जीवाजी महता ने शख फूक दिया। शख फूकते ही इशारा पाकर प्रतापगढ से तोप गरज उठी। फिर क्या था। आसपास की झाडियो-जगलो से निकलकर हज़ारो मावली दुश्मनो पर टूट पडे। अफजलखाँ की सेना को असल बात का उस समय तक पता नही लगा, जब तक किले से तोप नही छूटी। अब वे निकलकर बढे तो गाजर-मूली की भाँति काट डाले गए।

अफज़लखा मारा गया। उसके दो लडके, एक मुसलमान सरदार, दो मराठा सरदार ६० हाथी, ४ हज़ार घोडे, १,२०० ऊँट, बहुत-से

कपडे की गाँठे और १० लाख रुपया नकद शिवाजी के हाथ आया। शिवाजी विजय-वैजयन्ती फहराते, नगाडे बजाते किले मे लौटे। आगे-आगे भाले पर खान का कटा हुआ सिर था।

दूसरे दिन दरबार हुआ। उत्सव मनाए गए। खिलअतें बाँटी गईं। दुश्मन के सेनापति और सिपाहियो को राह-खर्च देकर बिदा किया गया। शत्रु की औरते और ब्राह्मण आदरपूर्वक बिदा हुए। वीर मराठो को इनाम बाँटे गए। जो मारे गए, उनके परिवारो को पेन्शने मिली। लूटे हुए हाथी-घोडे आदि सेनापतियो मे बाँटे गए।

दिग्दिगन्त मे इस घटना की चर्चा वायु-वेग से फैल गई। मुगल बादशाह गाज़ी आलमगीर का कलेजा भी काप गया।

२७

शिवाजी का रण-पाण्डित्य

अफज़लखाँ के मारे जाने की खबर से बीजापुर मे मातम छा गया। बडी साहिबा ने कई दिन तक खाना भी नही खाया। दरबार मे शोक मनाया गया। छोटे-बडे सभी आतक से थर्रा उठे। इस घटना से कुछ दिन पूर्व ही बीजापुर का वजीर आजमखाँ मारा गया था, और उसी प्रकार उसका पुत्र खवासखाँ भी कत्ल किया गया था। यह एक प्रकार की परम्परा-सी पड गई और अब यह चर्चा होने लगी कि देखे अब क्या होने वाला है। शिवाजी के सम्बन्ध मे भाँति-भाँति की चर्चाएँ होने लगी और दक्षिण से उत्तर तक शिवाजी ही शिवाजी लोगो कि जिह्वा पर खेलने लगे।

शिवाजी के विक्रम के साथ चातुर्य और साहस ने मिलकर हिन्दुओ की विग्रह-पद्धति मे एक आमूल क्रान्ति कर दी थी। अब तक केवल राजपूत ही मुसलमानो से टक्कर लेते थे। दूसरे यदि किसीने सिर उठाया भी था तो उसे विद्रोह ही कहा जाता था। केवल राजपूतो के प्रतिरोध

को युद्ध की सज्ञा दी जाती थी। राजपूत डटकर सम्मुख युद्ध करते थे। किन्तु उनमे सगठन-चातुर्य, कूटनीति और रण-कौशल नही था, न सेनापतित्व ही था। केवल शौर्य ही शौर्य था। वे जब लडते थे, हारकर पीछे लौटना अपमानजनक समझते थे। युद्धक्षेत्र मे ही कट मरते थे। विजय की भावना उनके मन मे थी ही नही। जूझ मरने की भावना थी। शत्रुओ की अपेक्षा उनकी शक्ति भी बहुत कम थी। इसीसे वे जब युद्ध को अग्रसर होते थे तो मरने की तैयारी करके, और बहुधा कट मरना तथा पराजय उनके पल्ले बधती थी। तिल-तिलकर मरना ही उनका शौर्य था। मुगल-सैन्य के साथ रहकर भी उन्होने नया युद्ध-कौशल नही सीखा। मुगलो ने उनकी अडिग भावना, कट मरने के सकल्प और उत्कट शौर्य का पूरा लाभ उठाया। उन्होने यह नीति अपनाई कि किसी मुस्लिम सेनापति के साथ किसी राजपूत राजा को नत्थी रखते थे—जिससे उसे केवल कट मरने के लिए रणक्षेत्र मे धकेल दिया जाता था, रण-कौशल मुगल सेनापति के हाथो रहता था। यही कारण था कि मुगलो के लिए तो उन्होने महासाम्राज्य जीता, पर अपने लिए सदैव हार ही पल्ले बाधी।

सच पूछा जाए तो महाभारत-सग्राम से लेकर मुगल साम्राज्य के पतनकाल तक हिन्दू-रणनीति मे सेनापतित्व का सर्वथा अभाव रहा। महाभारत-सग्राम मे हिन्दुओ ने जो रणनीति अपनाई, वही अन्तत मुगल साम्राज्य की समाप्ति तक चलती रही। उसका स्वरूप यह था कि सेनापति सबसे आगे आकर लडता था। जब तक वह कट न मरे, वही सबसे भारी जोखिम उठाता था। इस प्रकार वह युद्ध का सचालन नही करता था, स्वय युद्ध करता था।

परन्तु हिन्दू योद्धाओ के इतिहास मे शिवाजी ने ही सबसे प्रथम रण-चातुर्य प्रकट किया। वे कट मरने या युद्ध-जय के लिए नही लडते थे, उनका उद्देश्य राज्यवर्धन था। युद्ध उनका एक साधन था। वे युक्ति, शौर्य, साहस, दूरदर्शिता और रण-पाडित्य सभीका उपयोग करते थे।

तो अली आदिलशाह और बड़ी साहिबा ने हब्शी गुलाम सिद्दी जौहर को, जो सलावतखाँ के नाम से प्रसिद्ध था, १५,००० सवार देकर रवाना किया। उसके साथ अफजलखा का पुत्र फजलखाँ भी था जो अपने बाप का बदला चुकाने के लिए खार खाए बैठा था। जब शिवाजी को बीजापुर की इस कार्यवाही का पता लगा तो उन्होंने जहाँ-तहा छुटपुट लड़ाई करके और तेजी से लौटकर पन्हाला दुर्ग मे आश्रय लिया। इस समय उनकी सारी सेना बिखरी हुई थी तथा पन्हाला दुर्ग मे बहुत कम सेना थी। सिद्दी जौहर के १५,००० सवारो ने पन्हाला के किले को घेर लिया और पास की पहाड़ी पर मोर्चा जमाकर तोपों से आग उगलना आरम्भ कर दिया।

गरमी के भीषण दिन थे और पहाड़ियाँ लोहे की तरह तपकर लाल हो रही थी। किले मे रसद और पानी की भी बहुत कमी थी। इससे दिन पर दिन शिवाजी की कठिनाइयाँ बढती जाती थी।

इस समय रघुनाथ पन्त फतहखा से लोहा ले रहा था, जो कोंकण मे शिवाजी की स्वायत्त भूमि पर हमले कर रहा था। पुरन्दर, सगर व प्रतापगढ और उसके आसपास की भूमि की रक्षा मोरोपन्त के सुपुर्द थी।

सिद्दी जौहर की सेना बे-रोकटोक पन्हाला दुर्ग के समीप तक आ पहुँची थी और उसने दुर्ग को घेर लिया था। इस सेना को यहा तक आने मे मराठो ने बाधा नही पहुँचाई थी, किन्तु ज्यो ही बीजापुरी सेना ने मोर्चे बना दिए, नेताजी पालकर ने आसपास के प्रान्तो को उजाड़ना आरम्भ कर दिया। इससे शत्रु की सेना को रसद की सामग्री का अकाल पड गया। किन्तु सिद्दी जौहर मोर्चे पर डटा रहा।

किले को घेरे पाच महीने हो रहे थे। शिवाजी के पास बहुत कम सेना और रसद थी, फिर भी उन्होंने वीरतापूर्वक पाच महीने तक बीजापुरी सैना से पन्हाला मे कड़ा मोर्चा लिया। अब किले मे न एक बूद पानी था, न अन्न। जो सैनिक बच रहे थे, उनमे बहुत-से रोगी थे।

मरे हुए घोडो और सैनिकों की लाशो के सडने से किले का वातावरण दूषित हो गया था। इस समय शिवाजी के पास उनका स्वामिभक्त सरदार बाजीप्रभु और उसके थोडे-से सैनिक थे। बाजीप्रभु ने शिवाजी को वहा से निकल जाने का परामर्श दिया, पर शिवाजी सकट मे साथियो को छोडकर जाने को राजी नही होते थे।

अन्त मे बाजीप्रभु ने एक साहसपूर्ण योजना बनाई। उसने सिद्दी जौहर के पास सधि-प्रस्ताव भेजा और युद्ध बन्द करने की प्रार्थना की। जिससे सिद्दी ने प्रतिबन्ध ढीले कर दिए। युद्ध बन्द हो गया। दूतो का अभी आना-जाना चल ही रहा था कि अवसर पाकर शिवाजी दुर्ग से भाग निकले।

भयानक अधेरी रात थी। आकाश मे बादल घिर रहे थे। हवा के झोके पहाडियो से टकरा रहे थे। इसी समय अधेरी रात मे मुट्ठी-भर वीर मराठो ने नगी तलवारे लेकर किले का फाटक खोल दिया और द्रुत गति से पलायन किया। बीजापुरी सैनिक मार-मार करते दौडे, परन्तु वीरवर बाजीप्रभु तथा सैनिको ने गजपुर की घाटी मे उलटकर पीछा करने वालो को अपनी छातियो की दीवारो से रोक दिया। वे एक-एक कर अपनी जगह कट मरे और उनकी लोथे उनके द्वारा मारे गए शत्रुओ की लोथो पर गिर पडी। परन्तु शिवाजी सकुशल बचकर वहाँ से सत्ताईस मील दूर विशालगढ जा पहुँचे। इस समय उनके साथ अकेला उनका जीवनसाथी घोडा और विजयिनी तलवार थी। बाकी सब शूर उसी मुहिम मे खेत रह गए थे।

२६

पिता शत्रु का संधिदूत

शिवाजी के इस प्रकार पन्हाला दुर्ग से बच निकलने से आदिलशाह

द्वितीय बहुत क्रुद्ध हुआ । उधर अब शिवाजी अत्यन्त उग्रता से बीजापुर राज्य का विध्वस कर रहे थे। इससे बौखलाकर आदिलशाह ने सिद्दी जौहर को कैद करने बहलोलखा को भेजा और शिवाजी से निबटने को स्वय एक बडी भारी सेना लेकर निकला। उसने पन्हाला और दूसरे दुर्ग अधिकृत कर लिए परन्तु सिद्दी जौहर शिवाजी से शह पाकर कर्नाटक भाग गया और वहा उसने विद्रोह का झडा खडा कर दिया। इसी समय बरसात शुरू हो गई। अत उसे शिवाजी को परास्त करने का विचार छोड तेजी से बीजापुर लौटना पडा। अब उसने निरुपाय हो शाहजी को ही अपना सधिदूत बनाकर शिवाजी के पास भेजा।

बडा विचित्र सयोग था। पुत्र के पास पिता शत्रु का सधिदूत बनकर आया था। पिता-पुत्र की यह प्रथम भेट थी। आज तक शाहजी ने पुत्र का मुख नही देखा था।

जजुरी की छावनी मे शिवाजी ने पिता का स्वागत किया। शाहजी के साथ उनकी दूसरी पत्नी तुकोबाई और उनका पुत्र व्यकोजी भी था। सब लोग एक तम्बू मे घी से भरे कासे के एक बहुत बडे थाल के इर्द-गिर्द बैठे थे। सभी के मुख पर वस्त्र का पर्दा पडा था। पहले सबने एक-दूसरे के मुख की परछाई घृत मे देखी, फिर शिवाजी ने उठकर जीजा-बाई के चरणो मे प्रणाम किया।

शाहजी ने कहा—"आज मेरा बडा भाग्य है कि १९ बरस बाद पुत्र का मुख और साध्वी जीजाबाई का मुख देख रहा हूँ।"

"मैं आपका अपराधी हूँ। मैंने आपकी आज्ञाओ का बारबार उल्लघन किया। बीजापुर से युद्ध करता रहा और आपको प्राण-सकट का सामना करना पडा। अब मै बद्धाजलि आपकी शरण हूँ।" शिवाजी ने पिता के चरणो मे सिर झुका दिया।

शाहजी ने उन्हे उठाकर छाती से लगाकर कहा—"पुत्र, तुमने हमारे कुल मे नया साका चलाया, तुम-सा पुत्र पाकर मै इस लोक और परलोक मे धन्य हुआ। मैने मानता मानी थी कि जब मेरा पुत्र छत्रपति

बनेगा, तो मैं तुलजापुर की भवानी पर एक लाख की स्वर्णमूर्तिया चढाऊँगा। वह मूर्तियाँ चढाए चला आ रहा हूँ। आज से तू छत्रपति होकर प्रसिद्ध हो।"

इतना कहकर शाहजी स्वय शिवाजी के सिर पर छत्र लेकर सेवक की भाति खड़े हो गए। शिवाजी ने फिर पिता के चरणो मे सिर नवाया। शाहजी ने कहा—"मैंने तुम्हे रोकथाम के जो आदेश दिए थे, वे ऊपरी मन से ही थे। तुम्हारे प्रत्येक उत्थान से मैं खुश था। परन्तु बहुत बातों को सोचकर मैं तुमसे अलग-अलग ही रहा। इसमे तुम्हे लाभ ही हुआ। शत्रु की सब गतिविधि पर मैंने अकुश रखा।"

"पिता, आपने मेरा सब सकोच दूर कर दिया। आज्ञा कीजिए, क्या करूँ?"

"पुत्र, मैं आदिलशाह का दूत बनकर सन्धि-प्रस्ताव लेकर आया हूँ। आदिलशाह ने मुझे पूर्ण स्वतन्त्र राजा मान लिया है और अब तक जो राज्य-भूमि, किले तूने जीते है, उनपर तेरा अधिकार स्वीकार किया है तथा तेरे ही अनुकूल राज्य-सीमाएँ मान ली हैं। अब यही बात है कि जब तक मै हूँ, बीजापुर से विग्रह न कर। बीजापुर राज्य को मित्र राज्य समझ।"

शिवाजी ने पिता की आज्ञा को शिरोधार्य किया। सधिपत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। फिर कहा—"एक निवेदन मेरा भी है।"

"कह पुत्र।"

"घोरपाण्डे ने आपको धोखे से बन्दी बनाया था, उसे मैंने मधोल पर चढाई करके सपरिवार मार डाला है और उसकी ३,००० सेना का विध्वस भी कर दिया है। उसकी सब जागीर और खजाना, मै आपको अर्पण करता हूँ, स्वीकार कीजिए। मावतो के युद्ध मे पुर्तगाल वालो ने गोला-बारूद से उनकी सहायता की थी, अत: मैंने पचमहाल पर चढाई करके उसपर अधिकार कर लिया है तथा पचास हजार हूण दण्ड भी लिया—यह भी आप ही के चरणो मे अर्पण है। स्वीकार कीजिए।"

"पुत्र, तुमने मेरा कुल उज्ज्वल किया।" उन्होंने पुत्र को फिर आलिंगन किया और सभा विसर्जित हुई। जीजाबाई ने १९ वर्ष बाद पति-दर्शन किए थे—उसके नेत्रों में आंसू बह रहे थे।

३०

शाइस्ताखाँ से टक्कर

औरंगजेब को दक्षिण से सूचना मिली—'बीजापुर में एक आदमी ने विद्रोह करके कई किलों और बन्दरगाहों पर, जो बीजापुर दरबार के अधीन थे, कब्जा कर लिया है। उसका नाम शिवाजी है। वह चतुर और साहसी है। उसे मरने-जीने की परवाह नहीं है। प्रसिद्ध है कि उसमें कुछ गैबी हवाई ताकत है। उसने अफजलखाँ को मार डाला है। वह बीजापुर के शाह से भी बढ़ गया है और अब शाही इलाकों में लूट-मार करके बदअमनी फैला रहा है।'

औरंगजेब को निरन्तर फिर ऐसी ही सूचनाएँ मिलती रहीं। तब शिवाजी की तूफानी हलचलों से घबराकर औरंगजेब ने अपने मामू शाइस्ताखां को दक्षिण का सूबेदार बनाकर भेजा। दक्षिण आते ही उसने बीजापुर शाह से मिलकर यह आयोजन किया कि वह स्वयं उत्तर की ओर से और बीजापुरी सेना दक्षिण की ओर से शिवाजी पर आक्रमण करे। २५ फरवरी, १६६० को एक बड़ी सेना के साथ वह अहमदनगर से रवाना हुआ और ९ मई को पूना पहुँचा। इसके बाद पूना से चलकर वह चाकण के किले में गया और उसपर अपना अधिकार जमा लिया। परन्तु इस पहली ही मुठभेड़ में उसे बहुत हानि उठानी पड़ी। वह पूना लौट गया। वर्षा ऋतु उसने वहीं व्यतीत की। वर्षा की समाप्ति पर उसने उत्तर कोंकण पर एक सेना भेजी जहां एक छोटी-सी मुगल सेना पहले ही से पड़ी हुई थी। परन्तु उसकी यह चाल शिवाजी से छिपी न

रही। शिवाजी ने भी तेज़ी से आगे बढकर उमरखिण्ड के जगलो मे उसे इस प्रकार घेर लिया कि मुगल सेना को आगे बढने और पीछे लौटने के सब रास्ते बन्द हो गए। पशु और सैनिक प्यास से तडप-तडपकर मरने लगे। निरुपाय हो अपना सब असबाब, रुपया-पैसा और हथियार शिवाजी को सौपकर मुगलो ने अपनी जान बचाई। इसके बाद शाइस्ताखा की सेना के साथ छुटपुट कार्यवाही होती ही रही।

शाइस्ताखॉ बडा सावधान राजपुरुष और मजा हुआ सिपाही था। उसने बडी चतुराई से पूना मे अपने निवास का प्रबन्ध किया था। अफज़लखॉ की दुर्गति से वह बहुत भयभीय था। उसने अपनी नौकरी मे जितने घुडसवार मरहठे थे, सबको बर्खास्त कर दिया तथा शहर के पहरेदारो को कडी आज्ञा दे दी कि बिना परवाना किसी हिन्दू को शहर मे न घुसने दिया जाय।

उसने लाल महल मे अपना डेरा डाला जो शिवाजी का बाल्यकाल का भवन था। शाइस्ताखाँ के साथ उसका हरम भी था। महल के चारो ओर उसके अगरक्षको-नौकरो के रहने के स्थान, नौबतखाना, दफ्तर आदि थे। दक्षिण की ओर जो सडक सिंहगढ को जाती थी, उसके दूसरे छोर पर राठौर महाराज जसवन्तसिह अपने १०,००० राठौर सवारो के साथ मुकीम थे। इस सुरक्षा-व्यवस्था के होते हुए सभव न था कि शाइस्ताखा के ऊपर कोई आकस्मिक आक्रमण किया जा सके। परन्तु शिवाजी ने बडी ही सूझ-बूझ से शाइस्ताखा पर आक्रमण करने की योजना बनाई। उन्होने नेताजी पाल्कर और पेशवा मोरोपन्त के अधीन एक-एक हजार मावले पैदल और घुडसवारो की दो सहायक टुकडियाँ देकर उन्हे मुगल पडाव की बाहरी सीमा के दोनो ओर एक-एक मील की दूरी पर जा डटने का आदेश दिया और चार सौ चुने हुए सैनिको की एक टुकडी सेनापति चिमनाजी बापूजी के नेतृत्व मे पूना की ओर रवाना की। मुगल पहरेदारो के पूछने पर इस टुकडी ने अपने को शाही सेना के दक्षिणी सैनिक बताया और कहा कि वह उनको दी गई

चौकियो को सम्हालने जा रही है। सन्देह की निवृत्ति के लिए उन्होंने कुछ घण्टे वही सुस्ता लेने के बाद वहाँ से नगर की ओर कूच किया। यह घटना रविवार ५ अप्रैल, १६६३ के दिन हुई। सूर्यास्त के समय एक बारात ने पूना मे बाजा बजाते हुए प्रवेश किया। बारात को भीतर जाने का परवाना था जिनमे बाजे वाले, मशालची, बाराती, दूल्हा, सब मिलाकर कोई १००-१२५ आदमी थे। शिवाजी और उनके १६ आदमी घूस देकर मशालची और बाजे वालो मे मिल गए। किसीको भी इन-पर कोई सन्देह नहीं हुआ। उस दिन रमजान की छठी तारीख थी। दिन-भर के उपवास के बाद रात को ठूस-ठूसकर भरपेट माल-मलीदा खाकर सारे नौकर-चाकर और सिपाही गहरी नीद का आनन्द ले रहे थे। कुछ रसोइये आग जलाकर सूर्योदय से पहले ही सहरी तैयार करने की खटपट मे थे। शिवाजी का बाल्यकाल और यौवन के आरम्भिक दिन इसी महल मे व्यतीत हुए थे। वे महल के कोने-कोने से परिचित थे। पूना के गली-कूचे, प्रकट और गुप्त रास्ते भी वे भली भाँति जानते थे। शिवाजी चिमनाजी बापू को साथ लेकर गुप्त द्वार से महल के भीतर आगन मे जा पहुँचे। सामने ही बाहरी रसोईघर था और उसके बाद अन्त पुर। दोनो के बीच एक दीवार थी जिसमे एक पुराना दरवाज़ा था जो अन्त पुर की आड को पूरा करने के लिए ईंट और मिट्टी से पूरा कर दिया गया था। मराठो ने बडी आसानी ने ईंटे निकालकर उस दरवाज़े को खोल लिया। जो लोग रसोई मे खाने-पीने की खटपट मे लगे थे, वे अचानक इतने आदमियो को देख भौचक्के रह गए, परन्तु उन्हे अपने मुह से एक शब्द तक निकालने का अवसर न मिला। उन्हे काट डाला गया और तब शिवाजी चिमनाजी बापू को लेकर अन्त पुर मे जा घुसे। उनके पीछे थे उनके ४०० मावला वीर और उनकी नगी तलवारे। शिवाजी एकदम खान के शयनागर मे जा धमके। औरते भयभीत होकर चीख पडी। हडबडा कर शाइस्ताखा उठा और वह इतना घबरा गया कि दुमहले से नीचे कूद पडा। शिवाजी उसकी ओर झपटे किन्तु तलवार

के आघात से उसका एक अगूठा ही कटा। इसी समय किसीने सब दीपक बुझा दिए। अधेरे मे मराठे मारकाट करते रहे किन्तु दो दासियो ने जान पर खेलकर शाइस्ताखॉ को सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया। इस समय अन्त पुर के फाटक पर---महल के मुख्य पहरेदारो पर, हमला कर दिया और उन्हे काट डाला। फिर वे नौबतखाने मे पहुँचे और नौबत बजाने की आज्ञा दी। नौबत और नगाडो की इस तुमुल ध्वनि मे अन्त पुर का करुण क्रन्दन और पहरेदारो की चीख-चिल्लाहट डूब गई और मराठो ने अपनी हुकारो से ऐसा आतक उत्पन्न किया कि सैनिक और असैनिक प्राण लेकर भागने लगे। अब इस आशका से कि कदाचित् और सेना आकर उन्हे घेर न ले, शिवाजी वहाँ से नौ दो ग्यारह हो गए। न किसीने उनका पीछा किया, न उन्हे कोई हानि पहुँची। इस मुहिम मे कुल ६ मराठे मरे, ४० घायल हुए। उधर मराठो ने शाइ-स्ताखॉ के एक पुत्र, एक सेनापति, ४० नौकर, उसकी ६ पत्नियो और दासियो को मार डाला तथा दो पुत्रो, आठ स्त्रियो और शाइस्ताखॉ को उन्होने घायल किया। शाइस्ताखॉ इस घटना से ऐसा भयभीत हुआ कि वह दक्षिण से सीधा दिल्ली भाग चला और शिवाजी की धाक और स्थिति इतनी बढ गई कि मुसलमानी सेना मे लोग उन्हे शैतान का अव-तार मानने लगे और यह समझा जाने लगा कि उनसे बचने के लिए न तो कोई सुरक्षित जगह है, जहा शिवाजी न पहुँच सके और न कोई ऐसा काम है, जिसे वे न कर सके।

बादशाह इस समय काश्मीर को रवाना हो रहा था। उसने जब इस भयानक घटना का समाचार सुना तो अपनी दाढी नोच ली और शाइस्ताखॉ को हुक्म दिया कि वह दिल्ली मे मुह न दिखाए और सीधा बगाल चला जाए। उन दिनो बगाल की आबोहवा बहुत खराब थी। वहा मलेरिया और हैजे का प्रकोप बारहो मास रहता था जिसमे प्रतिवर्ष लाखो मनुष्य मर जाते थे। इसके अतिरिक्त अराकान के लुटेरो ने वहा आतक फैला रखा था। मुगलो का कोई सरदार बंगाल

जाने को राजी न होता था। बादशाह जिस सरदार को दण्ड देना चाहता था, उसे ही वहा भेजता था।

दक्षिण की सूबेदारी शाहजादा मुअज्ज़म को दे दी गई। शाइस्तखा दुख और शर्म से अधमरा-सा जब औरगाबाद के लिए कूच कर रहा था तो महाराज जसवन्तसिंह सहानुभूति प्रकट करने पहुँचे तो उसने खीभ-कर कहा—"मै तो समझा था कि दुश्मन के हाथो आप मर चुके है।"

३१
सूरत की लूट

जिस समय औरगाबाद मे सूबेदारो की यह अदला-बदली हो रही थी, शिवाजी ने अपने दो-तीन हजार चुने हुए मराठे योद्धाओ को लेकर सूरत की ओर प्रस्थान किया। इस समय तक नगर की रक्षा के लिए न तो कोई शहरपनाह थी, न सेना का ही विशेष प्रबन्ध वहाँ था। जो थोडी-बहुत सेना थी, वह किले मे रहती थी। सूरत एक महत्त्वपूर्ण बन्दर-गाह और मुगल राज्य का धनधान्य से भरपूर नगर था। वह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का भी केन्द्र था। यूरोपियन और अन्य विदेशी व्यापारियो की वहाँ बडी-बडी कोठियाँ थी। इस नगर की केवल चुगी की आमदनी बारह लाख रुपयो की थी।

जनवरी के आरम्भिक दिन थे। सर्दी काफी थी। अभी सूर्योदय हुआ था, लोग उठकर प्रात.-कृत्य कर रहे थे—कोई दातून कर रहा था, कोई स्नान की चिन्ता मे था। दूकानदारो ने दूकाने अभी खोली ही थी कि अचानक यह अफवाह फैल गई कि मराठे नगर लूटने को धॅसे चले आ रहे है और वे गण्डावी तक पहुँच चुके है। गण्डावी सूरत से कोई २८ मील के अन्तर पर था। नगर मे घबराहट फैल गई। लोगो मे आतक छा गया। किसीने विश्वास किया, किसीने नही। कुछ लोग स्त्री-बच्चो

को लेकर नगर से भाग गए। कुछ अपनी जान बचाने को नदी पार कर नदी के दूसरी ओर चले गए। कुछ धनी लोगो ने किलेदार को रिश्वतें दे-देकर किले मे शरण ली। परन्तु वह दिन योही सकुशल बीत गया। लोग कुछ निश्चिन्त हुए।

परन्तु दूसरे दिन पहर दिन चढे शिवाजी ने सूरत के पूर्वी ओर के बुरहानपुरी दरवाज़े से बाहर कोई दो फर्लांग की दूरी पर एक बाग मे अपना डेरा खडा किया। शहर के कोतवाल इनायतखा को उन्होने कहला भेजा कि मैं बादशाह से मिलने आगरे जा रहा हूँ। मेरा इरादा शहर के भीतर जाने का नही है। मैं बाहर ही बाहर जाऊँगा। परन्तु मराठे दूसरे दिन सूर्योदय होते ही नगर मे घुस पडे और घरो को लूट-लूट कर उनमे आग लगाने लगे। चारो ओर कुहराम मच गया। नगर कोतवाल इनायतखाँ नगर को अरक्षित छोडकर किले मे जा छिपा। लगातार चार दिन तक यह लूटमार और विध्वस का काम चलता रहा। प्रतिदिन सैकडो घर लूटपाट कर आग की भेंट किए जाने लगे। नगर का लगभग दो-तिहाई भाग सर्वथा नष्ट हो गया।

डच फैक्टरी के पास वहरजी बौहरे का विशाल महल था। वहरजी उस काल ससार के सबसे धनवान पुरुष थे। उनकी जायदाद अस्सी लाख रुपयो की बताई जाती थी। वहरजी के महल को मराठो ने तीन दिन तक जी भरकर लूटा। वहा के फर्श तक खोद डाले और अन्त मे उसमे आग लगा दी।

अंग्रेजो की फैक्टरी के पास हाजी सैयदबेग नामक एक और धनी व्यापारी की गगनचुम्बी अट्टालिका थी। उसके बडे-बडे मालगोदाम भी थे जिनकी कतारे दूर तक चली गई थी। अपनी इस सारी सम्पत्ति को अरक्षित छोडकर वह व्यापारी भागकर किले मे छिप गया। मराठे घरो मे, फैक्टरियो मे, गोदामो मे घुस-घुसकर वहाँ के दरवाजो और तिजोरियो को तोड-तोडकर नकद रुपया, कपडे और अन्य ढेर सारी सामग्री उठा-उठाकर निरन्तर चार दिनो तक लाते रहे। केवल अंग्रेजो ने इन लुटेरे

मराठो पर प्रत्याक्रमण किया। सूरत के डरपोक इनायतखाँ ने सन्धि-चर्चा के बहाने अपने एक अनुचर को शिवाजी के पास भेजकर उन्हे मार डालने का षड्यन्त्र रचा। परन्तु वह अनुचर तुरन्त मार डाला गया। इस प्रकार समृद्ध सूरत को चार दिन तक निश्शक लूटपाटकर जब शिवाजी ने सुना कि नगर-रक्षा के लिए सेना आ रही है—वे वहाँ से चल पडे। कुल मिलाकर एक करोड रुपया सूरत की लूट से उनके हाथ लगा।

परन्तु लौटकर उन्होने सुना कि शाहजी का स्वर्गवास हो गया है। शिवाजी के यश ने यद्यपि शाहजी के यश को ढक दिया था, परन्तु शाहजी वास्तव मे असाधारण व्यक्ति थे। शाहजी से पहले दक्षिण मे हिन्दू रईस मुसलमान शासको के सहायक समझे जाते थे। दक्षिण मे उनकी कोई स्वाधीन सत्ता नही थी। बीजापुर या गोलकुण्डा की शाहियो मे यदि किसी हिन्दू रईस को पाँचहजारी का मनसब मिल जाता था तो उसका जीवन धन्य माना जाता था। पर शाहजी ने एक नई शान पैदा की थी। वे बडे से बडे मुसलमान सरदार से टक्कर लेने लगे थे। शाह को गद्दी पर बैठाने और उतारने वालो मे उनका नाम आ गया था। वास्तव मे वे दक्षिण के भाग्य-निर्माता बन गए थे। हकीकत यह थी कि शाहजी ने ही शिवाजी के लिए राजनैतिक नेतृत्व करके उनके लिए स्वाधीनता का मार्ग साफ किया था।

शाहजी के मरने का दुख शिवाजी और जीजाबाई को भी बहुत हुआ। यद्यपि उन्होने इन दोनो माता-पुत्र को त्याग दिया था, फिर भी जीजाबाई सती होने को तैयार हो गईं। पर शिवाजी ने उन्हे समझा-बुझाकर रोक दिया। मल्लूजी को अहमदनगर से राजा की उपाधि मिली थी। शाहजी के मरने पर वह उपाधि शिवाजी ने ग्रहण की और रायगढ मे एक टकसाल स्थापित की, जहाँ राजा शिवाजी के नाम के सिक्के ढाले जाने लगे।

३२

मिर्जा राजा जयसिह

शाइस्ताखाँ की हार ने ही औरगजेब को बहुत क्षुब्ध कर दिया था। अब सूरत की इस लूट ने उसे बौखला दिया। परन्तु इसी समय आगरे मे शाहजहाँ की मृत्यु हो गई और बहुत-सा समय उसके मातम मे बीत गया। इस समय दक्खिन का नया सूबेदार शाहज़ादा मुअज्ज़म औरगाबाद मे पडा हुआ शिकार और आमोद-प्रमोद मे बेफिक्री से अपने दिन काट रहा था। शाइस्ताखाँ के दक्षिण से जाने के बाद अब उसे एक वर्ष बीत रहा था, फिर भी दक्षिण मे आकर उसने कोई मार्के का काम नही किया था। सूरत की लूट जैसी जबरदस्त घटना हो जाने पर भी वह कान मे तेल डाले पडा रहा। औरगज़ेब ने अब सलाह-मशविरा करके अपने सारे हिन्दू और मुसलमान सेनापतियो मे सर्वश्रेष्ठ सेनापति महाराज जयसिह कछवाहा को और अपने अनुभवी और प्रसिद्ध सेनापति दिलेरखाँ को शिवाजी को कुचल डालने के लिए रवाना किया।

जयसिह एक मँजा हुआ सिपाही और दूरदर्शी सेनापति था। उसने मध्य एशिया मे स्थित बल्ख से लेकर सुदूर दक्षिण मे बीजापुर तक और पश्चिम मे कन्धार से लेकर पूर्व मे मुगेर तक साम्राज्य के हर भाग मे युद्ध किया था। शाहजहा के लम्बे शासनकाल मे कदाचित् ही कोई ऐसा वर्ष बीता होगा, जब इस राजपूत योद्धा ने किसी बडी चढाई मे अग्रभाग न लिया हो। वह प्रसिद्ध विजेता था। इसके अतिरिक्त वह जैसा विलक्षण व सफल योद्धा और सेनापति था, वैसा ही था गूढ कूटनीतिज्ञ राजपुरुष भी। बादशाह शाहजहाँ और औरगज़ेब भी कठिन समय मे सदा उसका मुह ताकते थे। वह बडा भारी राजनीतिज्ञ, व्यवहार-कुशल और धैर्यवान पुरुष था। मुगल दरबार के उसने बडे ऊँचे-नीचे दिन देखे थे, और मुगलो के दरबारी शिष्टाचार मे वह पूर्ण

पारगत था। राजस्थानी भाषा और उर्दू के अतिरिक्त सस्कृत, तुर्की और फारसी भाषाओ का भी उसे पूरा ज्ञान था। इन सब दुर्लभ और असाधारण गुणो के कारण वह दिल्ली के दरबार और शाही सेना मे सर्वप्रिय और आदरणीय माना जाता था, जहाँ अफगान, तुर्क, राजपूत और हिन्दुस्तानी लोगो की मिली-जुली शक्तियाँ मुगलो के दूज के चाद से अकित शाही झण्डे के नीचे सगठित थी। प्राय राजपूत जोशीले, असावधान, साहसिक, नीतिरहित और अव्यावहारिक हुआ करते है, परन्तु राजा जयसिह के व्यक्तित्व मे अद्भुत दूरदर्शिता, राजनैतिक धूर्त्तता, बातचीत मे मिठास, और विपत्काल मे सूझ-बूझ अपवाद रूप मे थी।

जयसिह बडी तेजी से चलकर ताबडतोड दक्षिण मे आ धमका। उसने सबसे पहले बीजापुर के सुलतान की आशाओ का ठीक-ठीक अध्ययन किया और आदिलशाह को आशा दिलाई कि यदि आदिलशाह मुगलो से मित्रता का व्यवहार करे, और यह प्रमाणित कर दे कि शिवाजी के साथ उसका कोई सम्बन्ध नही है, तो औरगजेब उसपर प्रसन्न हो जाएगा और बीजापुर से वसूल होने वाली टाके की रकम मे काफी कमी करवा देगा। बीजापुर दरबार को सहमत करके उसने बीजापुर के अन्य सारे शत्रुओ को भी अपने साथ मिला लिया और सब ओर से एक साथ ही शिवाजी पर आक्रमण करने का आयोजन किया।

३३

पुरन्दर की चढाई

३१ मार्च को वह आगे बढकर पुरन्दर की ओर चला और पुरन्दर से चार मील दूर पुरन्दर और सासबढ के बीच अपना पडाव डाला और पुरन्दर के किले को घेर लिया। सासबढ से ६ मील दक्षिण मे पुरन्दर

का विशाल पर्वत सीधा खडा था। उसकी सबसे ऊँची चोटी आसपास के समतल मैदान से कोई २,५०० फुट से भी अधिक ऊँची तथा कुल मिलाकर समुद्र की सतह से ४,५६४ फुट ऊची थी। वास्तव मे यह एक नैसर्गिक दुहरा किला था। इसके पूर्व मे बिलकुल सटी हुई एक पहाडी पर वज्रगढ नाम का एक दूसरा सुदृढ किला था। पुरन्दर का किला जिस पहाडी पर बना हुआ था, वह चारो ओर से बहुत ही ऊची चट्टानो से निर्मित थी। इससे कोई ३०० फुट नीचे एक और परकोटा था, जो माची कहलाता था। पुरन्दर के ऊपरी किले की उत्तर-पूर्वी सीमा खडकला बुर्ज के तल से आरम्भ होकर भैरवखण्ड नामक एक ऊची पहाडी पूर्व मे एक सकरी पर्वत-श्रेणी के रूप मे कोई एक मील तक चली गई थी, जिसने दूसरे सिरे पर समुद्र से ३,६१८ फुट ऊचे एक छोटे-से पठार का रूप धारण कर लिया था। यहाँ पर वज्रगढ नाम का किला था। माची के उत्तरी भाग मे सैनिको के रहने के स्थान थे और वज्रगढ का किला माची के बिलकुल ऊपर था।

जयसिंह ने एक अनुभवी सेनानायक की भाँति पहले वज्रगढ पर आक्रमण किया और लगातार गोलाबारी करके सामने की बुर्ज के नीचे की दीवार को तोड डाला और बुर्ज पर धावा करके मराठो को किले के पीछे की ओर धकेल दिया और ऐसी जोर की गोलाबारी की कि दूसरे दिन सूर्यास्त होते-होते किले पर उसका अधिकार हो गया। अब दिलेरखा को पुरन्दर पर आक्रमण करने की आज्ञा देकर जयसिंह ने सैनिको के दल मराठा प्रदेश मे लूटमार के लिए रवाना किए।

दिलेरखॉ वज्रगढ को पुरन्दर से जोडने वाली पर्वत-श्रेणी के सहारे-सहारे पुरन्दर की ओर बढा, और माची को जा घेरा तथा किले के उत्तर-पूर्वी सिरे पर खडकला बुर्ज की ओर उसने खाइयाँ खुदवानी आरम्भ की। निरन्तर घमासान लडाई के बाद मुगलो ने माची के पॉच बुर्ज अधिकृत कर लिए। अब पुरन्दर का किला उसके सामने था।

३४

सुलह की बातचीत

पुरन्दर का किलेदार मुरारजी बाजीप्रभु एक वीर पुरुष था। उसके पास केवल सात सौ चुने हुए मावले थे। इस समय दिलेरखा पाच हजार पठानो और अन्य जातियो के सैनिको को लेकर चारो ओर से पहाडी पर चढने का यत्न कर रहा था। मुरारजी बाजीप्रभु ने बडी वीरता से किले की रक्षा की और ५०० पठानो को मार गिराया। अन्त मे वह सात सौ वीरो को साथ लेकर मार-काट करता हुआ किले से बाहर निकला। उसकी वीरता और साहस को देखकर दिलेरखा ने उसे सन्देश भेजा कि यदि वह आत्मसमर्पण कर देगा तो वह उसे अपनी अधीनता मे एक ऊँचा पद देगा। परन्तु उसने अस्वीकार कर दिया और लडते-लडते युद्धभूमि मे जूझ मरा। उसके बहुत-से साथी भी उसके साथ कट मरे, और जो बचे वे किले मे लौट आए। इस समय पुरन्दर के किले मे मराठा अधिकारियो के बहुत-से कुटुम्ब आश्रय लिए बैठे थे। अब शिवाजी को यह भय उपस्थित हुआ कि पुरन्दर का पतन होने पर ये सब कैद हो जाएँगे और उन्हे अपमानित होना पडेगा। निरुपाय शिवाजी ने जयसिंह के पास सधि का प्रस्ताव भेजा।

११ जून को प्रात:काल पुरन्दर के नीचे तम्बू मे जयसिह ने दरबार किया और शिवाजी ने राजसी ठाठ से वहा आकर जयसिह से भेट की। जयसिह ने यथोचित सम्मान से शिवाजी का स्वागत किया। सन्धि-वार्ता आधी रात तक चलती रही और अन्त मे पुरन्दर की प्रसिद्ध सन्धि पर दोनो पक्ष के हस्ताक्षर हो गए। सन्धि की शर्तों के अनुसार चार लाख हूण वार्षिक आय वाले शिवाजी के तेईस किले मुगल साम्राज्य मे मिला लिए गए और राजगढ के किले सहित एक लाख हूण की वार्षिक आय वाले कुल बारह किले इस शर्त पर शिवाजी के पास रहने दिए

गए कि वे मुगल साम्राज्य के राजभक्त सेवक बने रहेगे। विशेष रूप से उनका यह आग्रह भी स्वीकार कर लिया गया कि अन्य राजाओ की भाति उन्हे शाही दरबार मे निरन्तर रहने से मुक्त किया जाएगा, लेकिन उनका पुत्र उनके प्रतिनिधि की हैसियत से बादशाह के दक्षिण आने पर उसके दरबार मे उपस्थित रहेगा और दक्षिण के मुगल सूबेदार के साथ स्थायी रूप से रखे जाने वाले पाच हज़ार सेना का नेतृत्व भी उनका पुत्र करेगा। इन पाच हजार सवारो की तनख्वाह के लिए एक जागीर शिवाजी को दे दी गई। शिवाजी ने एक समझौता यह भी किया कि मुगल बादशाह यदि कोकण की तराई मे चार लाख हूण की वार्षिक आय का प्रदेश उनके अधिकार मे छोड दे और बीजापुर की विजय के बाद भी ये प्रदेश उन्हीके अधिकार मे रहने दिए जाएँ तो वे तेरह वार्षिक किस्तो मे चालीस लाख हूण बादशाह की भेट करेगे। यह भी तय हुआ कि बीजापुर की चढाई के बाद शिवाजी मुगल दरबार मे बादशाह को सलाम करने के लिए जाएँगे।

३५

अयाचित भेट

अकस्मात् एकाएक शिवाजी के आगमन का समाचार सुनकर महाराज जयसिह अवाक् रह गए। वे हडबडाकर खेमे के बाहर आए। शिवाजी देखते ही दौडकर उनके चरणो मे झुके, पर महाराज ने उन्हे लपककर अक मे भर लिया और भीतर लाकर उन्हे गद्दी पर दाहिनी ओर बैठाया और कहा—"आपने बडी कृपा की, अब इसे अपना ही घर समझिए।"

शिवाजी ने कहा—"महाराज, अपना घर समझकर ही आया हूँ और श्रीमानो के सद्व्यवहार से सम्मानित हूँ। आपका सेवक हूँ और आपकी आज्ञा से विमुख नही। किन्तु हे महाराजाओ के महाराज, हे

भारतीयोद्यान की क्यारियो के माली, हे श्रीराम के वंशधर, आपसे सब राजपूतो की गर्दन ऊँची है। आपकी यशस्विनी तलवार से बाबर के खानदान की श्रीवृद्धि हो रही है। सौभाग्य आपका साथ दे रहा है। हे सौभाग्यशाली बुजुर्ग, मैं आपको प्रणाम करता हूँ।"

इतना कहकर शिवाजी ने अपना मस्तक राजा के चरणो मे झुका दिया। फिर कहा—"मैंने सुना है, आप दक्षिण-विजय की ठानकर आए हैं। महाराज, क्या आप दुनिया के सामने हिन्दुओ के रक्त से अपने को रगना चाहते हैं? क्या आप नही जानते, यह लाली नही है, कालिमा है? यह धर्मद्रोह है?"

कुछ देर शिवाजी चुप रहे। महाराज जयसिह के मुह से बोली नही फूटी। शिवाजी ने फिर कहा—"हे वीर शिरोमणि, आप यदि दक्षिण को अपने लिए जय किया चाहते है, तो यह भवानी की तलवार आपको समर्पित है। मेरा मस्तक आपके चरणो मे नत है। परन्तु यदि आप उस पितृ-भ्रातृघाती, हिन्दू-विद्वेषी औरगजेब के सेवक हैं तो महाराज, मुझे बताइए आपके साथ कैसा व्यवहार करू? यदि तलवार उठाता हूँ तो दोनो ओर हिन्दू-रक्त गिरता है। आप मुझ दास से युद्ध करके भले ही हिन्दू-रक्त पृथ्वी पर गिराए पर मुझसे यह नही हो सकता। हे महाराजाओ के महाराज, यदि आपकी तलवार मे पानी है और आपके घोडे मे दम है, तो मेरे साथ कन्धा भिडाकर देश और धर्म के शत्रु का विध्वस कीजिए और रामचन्द्र के देववश को उज्ज्वल कीजिए। आने वाली पीढियाँ आपका वरद बखान करेगी।"

महाराज जयसिह विचलित हुए। शिवाजी के वीर वचनो से वे आन्दोलित हो बडी देर तक चुप बैठे रहे। कही उनकी आँखो की कोर मे एक आँसू आया। उन्होने कुछ ठहरकर कहा—"राजन्, शिवाजी राजे, मेरी बात सुनिए, मैं आपके पिता की आयु का हूँ। युक्ति, युगधर्म और राजनीति का बुद्धिमानी से पालन कीजिए। इसीमे भलाई है।"

"तो महाराज, मैं आपको पिता के समान समझता हूँ। आप

अपने इस पुत्र के सिर पर हाथ रखकर जो आदेश देगे वही मैं करूंगा।"

"ऐसा ही होना चाहिए राजन्! मेरे वचन पर विश्वास कीजिए। मैं जो कहूँगा, वह पालन करूगा। औरगजेब आपके विद्रोह को क्षमा कर देगा। और आपको सम्मानित करेगा। आप उसकी अधीनता स्वीकार कर लीजिए।"

शिवाजी गाल पर हाथ धर के गहरे सोच मे डूब गए। महाराज जयसिह ने कहा—"राजेन्द्र, मै भी सब समझता हूँ। मेरी सामर्थ्य भी कम नहीं है और सब राजपूत राजे भी मुझसे बाहर नही है। परन्तु विद्रोह के लिए विद्रोह तो राजनीति नही है। युद्ध-विग्रह इसलिए होते है कि अनुकूल निर्णय हो और ये सब बाते शौर्य पर निर्भर नही होती। परिस्थितियो को भी विचारना पडता है। मेरी बात मानिए राजन्, इससे युद्ध-विग्रह मे जो आपका जीवन नष्ट हो रहा है, सो उसे अपने देश की समृद्धि-वर्धन मे लगाइए। औरगजेब जो आप चाहेगे, वही करेगा। यह मेरा आपको वचन है।"

"तो आप मुझे आत्म-समर्पण करने की आज्ञा दे रहे है?"

"क्यो नही, अब तो मेरा आपका पिता-पुत्र का सम्बन्ध हुआ। पुत्र के लिए जो श्रेयस्कर है, वही पिता करेगा।"

"महाराज, बचपन से मैने हिन्दू धर्म और गौ-ब्राह्मण की रक्षा का व्रत लिया था, मेरा वह महान् उद्यम आज समाप्त हो जायगा।"

"नही राजन्, प्राप ऐसा क्यो सोचते है? आपने हिन्दू राज्य दक्षिण मे स्थापित किया है, मेरी बात मानने से वह अकटक और स्थिर रहा आएगा। औरगज़ेब आपको दक्षिण का राजा स्वीकार कर लेगा।"

"और यदि मैं आत्मसमर्पण न करूँ तो?"

"तो आप स्वतन्त्र है। युद्ध कीजिए। पर शत्रु के बलाबल पर भी विचार कीजिए। युद्ध मे असीम शौर्य प्रकट करके भी आपको सफलता नही मिलेगी। आपके प्रिय सहचर कट मरेगे, अथाह धन नष्ट होगा

श्रौर पराजय की लज्जा पल्ले पडेगी। इसीसे कहता हूँ—अपना राज्य, अपने सेवक, अपना धन बचा लीजिए।"

"महाराज, बचपन ही से मैं इस सह्याद्रि की दुर्गम चोटियों और तलहटियो मे घूमता रहा, मैंने स्वप्न देखा कि साक्षात् भवानी ने मुझे आज्ञा दी थी कि खड्ग लो—देवता, ब्राह्मण, गौ और धर्म की रक्षा करो। मैंने वीरश्रेष्ठो को पराजित कर दुर्ग पर दुर्ग जय किए, शत्रु जय किए, देश जय किए, राज्य का विस्तार किया। हे वीर शिरोमणि, क्या मेरा यह आशय बुरा था ? अब क्या मै भवानी के आदेश को त्याग दूँ ? आप पिता हैं, पुत्र को आदेश दीजिए।"

"राजन्, पुत्रवत् ही कहता हूँ। अब आप स्वप्न को त्याग दीजिए। जाग्रत हो जाइए। नीति और धर्म मे मेल कर लीजिए। वही कार्य कीजिए, जिसमे नीति-धर्म हो।"

"नीति-धर्म क्या है ?"

"जिसमे हानि कम हो, लाभ अधिक हो। वर्तमान निरापद हो। भविष्य की आशाएँ हो। यह नीति-धर्म है, यही व्यवहार-दर्शन है।"

"महाराज, मैं इस दर्शन को समझा नहीं।"

"राजन्, मेरी बात ध्यान से सुनिए, मुगल साम्राज्य की दीवारे खोखली हो रही हैं। विलास और आलस्य ने उसे ग्रस लिया है। उसके पतन मे अब देर नहीं है। शीघ्र ही मुगल तख्त चूर-चूर होगा। तब हिन्दू-राज्य उदय होगा। उस दिन के लिए महाराष्ट्र मे महाराज्य की प्रतिष्ठा के लिए इस समय की बाधाओ से अपनी हानि बचा लीजिए। मेरा आशीर्वाद है कि एक दिन महाराष्ट्र मे स्थापित आपकी यह हिन्दू शक्ति समूचे भारत को आक्रान्त करेगी।"

"तो महाराज, आप जैसे महापुरुष उस डगमग मुगल साम्राज्य के स्तम्भ क्यो हो रहे है ?"

"राजन्, हम राजपूत जो व्रत लेते है, उसे जीते जी नहीं त्यागते। व्रत-पालन के सामने हम सुख-दुख, हानि-लाभ का विचार नहीं करते।"

"तो फिर आप लाभ की आशा से मेरा व्रत भग कराना क्यो चाहते है ? हम मराठे भी अपने व्रत के लिए जीवन-दान से पीछे नही हटते। तीस बरस तक मैने सह्याद्रि मे यही किया है। अब आज वह व्रत मै त्याग दूँ ?"

शिवाजी के नेत्रो से झर-झर आँसू बहने लगे। महाराज जयसिह जडवत् बैठे रहे। फिर उन्होने गम्भीर वाणी मे कहा—"वीरवर, वीरो के रक्त से सीचा जाकर ही स्वाधीनता का बीज उगता है। महाराष्ट्र का गौरव मुझसे अप्रकट नही है। मुझे दीखता है कि एक दिन मराठे भारत के अधीश्वर बनेगे। परन्तु मराठो को आप जो शिक्षा दे रहे हैं, वह मुझे उचित नही प्रतीत होती। आप उन्हे आज ग्राम लूटना सिखाते हैं, कल उत्कर्ष पाकर वे सारे भारतवर्ष को लूटेगे। आज आप उन्हे चतुराई से जयलाभ करना सिखाते है, कल वे सम्मुख युद्ध मे जयलाभ नही कर सकेंगे। ये वे दोष है, जो जातियो के रक्त मे घुस जाते है। याद रखिए शिवाजी राजे, कल जो जाति भारत मे हिन्दू राज-राजेश्वर के पद पर विराजमान होगी, आप उसके स्रष्टा, निर्माता और गुरु है। आप उन्हे यदि कुशिक्षा देगे तो सैकडो वर्षो तक देश-देश, नगर-नगर मे जहाँ मराठे जाएँगे, अपने शौर्य से नेकनामी हासिल न कर सकेगे। आप उन्हे राजपूतो की भाति सम्मुख रणक्षेत्र मे मरना-मारना सिखाइए और कभी मत भूलिए कि आप एक युगावतार है। आपके प्रत्येक आचरण का प्रभाव चिरकाल तक सम्पूर्ण देश पर पडेगा।"

शिवाजी बहुत देर तक मौन बैठे रहे। फिर बोले—"आप भीष्म के समान राजनीति-गुरु है, महाराज ! आपके चरणो मे मेरा मस्तक नत है। पर जब मै आत्मसमर्पण कर दूँगा तो मराठो को युद्ध की शिक्षा कैसे दूँगा ?"

"शिवाजी राजे, राजनीति और रणनीति क्षण-क्षण पर अपना रूप बदलती है। बुद्धिमान पुरुष समयानुकूल अपना रुख बदलते है। जय-पराजय भी सदा कायम नही रहती। आज हार, कल जीत। आज

आप दिल्लीपति की शरण जाते हो, समय के हेर-फेर से कल दिल्लीपति आपकी शरण आ सकता है। परन्तु आवश्यकता इस बात की है कि जब तक आप निर्बल है, तब तक अपनी शक्ति व्यर्थ नष्ट न कर कल के लिए बचा रखिए। यही सब नीतियो का सार है।" फिर महाराज जयसिंह ने शिवाजी के सिर पर हाथ धरकर कहा—"शिवाजी राजे, निश्चिन्त रहो, अब न महाराष्ट्र का गौरव घट सकेगा, न हिन्दुओ का स्वातन्त्र्य। मुगल राज्य अब नही रहेगा।"

"तो हे महाराजाओ के महाराज, आप मेरे लिए पिता के समान है। यह तलवार मैं आपको अर्पण करता हूँ। मै अब युद्ध नही करूँगा। मैंने आपको आत्मसमर्पण किया।" इतना कहकर शिवाजी ने तलवार महाराज जयसिंह के हाथो मे दे दी। महाराज जयसिह ने तलवार मस्तक से लगाई, चूमी और कहा—"शिवाजी राजे, यह भवानी की पवित्र तलवार है। हिन्दू धर्म की रक्षक है। आओ, इसे मै उपयुक्त स्थान पर अपने हाथो स्थापित करू।"

वे उठ खडे हुए। शिवाजी भी खडे हुए। महाराज ने तलवार उनकी कमर मे बाँधकर उन्हे अक मे भर लिया और कहा—"अब विदा शिवाजी राजे, अपने प्रधानमन्त्री रघुनाथ पन्त को भेज देना। सन्धि की शर्तो मे आपका पूरा ध्यान रखूँगा।"

"आप मेरे पिता है। मै आपके अधीन हूँ। आप जैसा ठीक समझे वही कीजिए।"

इतना कहकर प्रणाम कर शिवाजी वहा से चल दिए।

३६

मुगल और बीजापुर

बीजापुर के सुलतान से औरगज़ेब के क्रुद्ध हो जाने का एक और कारण

था। जब औरगजेब आगरे के तख्त के लिए सघर्ष कर रहा था, तो उससे लाभ उठाकर आदिलशाह ने अगस्त १६५७ की सन्धि-शर्तो का कुछ उल्लघन किया था। जब जयसिह ने शिवाजी पर अभियान किया तो उसे पता लगा कि बीजापुर दरबार गुप्त रूप से शिवाजी के साथ मित्रता करके उसे जमीन, धन और दूसरी आवश्यक वस्तुएँ देता रहा था। जब शिवाजी के साथ सन्धि हो गई तो जयसिह की अधीनता मे सगठित यह महती सेना खाली हो गई। उसे किसी न किसी अभियान मे लगाना अत्यावश्यक था। इसलिए आगे-पीछे की बातो का बहाना लेकर जयसिह ने बीजापुर पर अभियान करने की ठान ली। पुरन्दर-सन्धि के अनुसार शिवाजी ने यह वायदा किया था कि यदि मुगल बीजापुर पर आक्रमण करेगे तो शाही मनसबदार होने के नाते उनका पुत्र शम्भाजी २,००० घुडसवार लेकर मुगलो की सहायता करेगा। और वह स्वय भी ७,००० चुने हुए मावलियो को लेकर मुगल सेना के साथ ही जाएँगे। जयसिह ने बीजापुर के आश्रित अन्य राज्यो को भी मनसब देने का प्रलोभन देकर तोड लिया। और जब इसकी सारी तैयारियाँ पूरी हो चुकी तो १६ नवम्बर, सन् १६६५ को उसने बीजापुर की ओर बाग उठाई। उसके साथ ४० हजार शाही सेना थी। इसके अतिरिक्त नेताजी पालकर के नेतृत्व मे २ हजार मराठा घुडसवार और ७ हजार पैदल सिपाही उसके साथ थे। चढाई के पहले महीने मे जयसिह बिना रोक-टोक आगे बढता चला गया। राह मे पडने वाले बीजापुरी किले—पल्टन, पथरावा खटाव और मगलविदेह, जो बीजापुर से केवल ५२ मील ही उत्तर मे थे, एक-एक करके खाली कर दिए गए। अन्तत पहली मुठभेड २५ दिसम्बर, १६६५ को हुई। शाही सेना का नेतृत्व शिवाजी और दिलेरखा कर रहे थे और बीजापुरी सेना के १२ हजार योद्धा सेनापति सरजाखा और खवासखा के अधीन सामने आए। बीजापुरी सेना मे मराठे सरदार—कल्याण के जादवराव और शिवाजी के सौतेले भाई व्यकोजी, उनके साथ थे।

बीजापुरी सेना ने दिल्ली के सशक्त घुडसवारो के सीधे आक्रमण से

बचने के लिए कज्जाकों की युद्ध-शैली का अनुसरण किया और दल बनाकर दौड़ते-भागते लड़ते रहे। सध्या पड़ते-पड़ते बीजापुरी सेना युद्ध-क्षेत्र से पीछे हटने लगी किन्तु ज्यों ही विजयी मुगल सेना अपने पड़ाव की ओर फिरी, बीजापुरी सेना ने दोनों बगलों और पृष्ठ भाग पर आक्रमण कर दिया। बड़ी ही कठिनाई से परिस्थिति को सभाला गया। उधर सरजाखाँ ६ हज़ार घुड़सवार लेकर मगलविदेह के किले पर जा धमका। मुगल किलेदार सरफराज़खा किले से बाहर निकला और लड़ता हुआ काम आया।

दो दिन रुकने के बाद जयसिंह ने दूसरा युद्ध किया। दक्षिणी सवारों ने पूर्व की भाँति अलग-अलग दलों में बँटकर छुट-पुट आक्रमण किए, किन्तु सूर्यास्त होते-होते वे भाग निकले। ६ मील तक मुगलों ने भागते हुए उनका पीछा किया। अब जयसिंह बीजापुर से कोई १२ मील तक आ पहुँचा, परन्तु यहाँ आदिलशाह ने बड़ी दृढता और वीरता से उसका सामना किया। जयसिंह तेजी से बढता हुआ मगलविदेह तक पहुँचा परन्तु उसके पास न बड़ी-बड़ी तोपें थीं और न आवश्यक युद्ध-सामग्री ही। यह सामग्री उसने परेण्डा के किले से नहीं मगवाई थी। इसी समय आदिलशाह को गोलकुण्डा से भारी सहायता मिल गई और मुगल सेना को भूखों मरने की नौबत आ गई। उसे वापस लौटना पड़ा और बीजापुरी सेना ने उसे खदेड़ा। २७ जनवरी को वह परेण्डा से १६ मील दक्षिण में सोना नदी पर स्थित सुलतानपुर में जा पहुँचा। उसे जनवरी का पूरा महीना लौटने में लग गया और इस बीच उसे बड़ी दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ा। सरजाखाँ ने उसकी बहुत-सी खाद्य व युद्ध-सामग्री लूट ली। उधर शिवाजी ने पन्हाला के किले पर जो आक्रमण किया, उसमें शिवाजी के कोई १,००० सैनिक काम आए और फिर भी किला उनके हाथ नहीं आया। शिवाजी का प्रधान अधिकारी नेता शिवाजी से विश्वासघात करके और बीजापुरियों से ४ लाख हूण रिश्वत लेकर उनसे जा मिला। ये सब दुर्घटनाएँ तो मुगलों के अभि-

यान के विरोध मे थी ही, कि आदिलशाह की मदद के लिए गोलकुण्डा के सुलतान ने १२ हजार घुडसवार और ४० हजार पैदल सेना भेज दी। फिर भी जयसिह ने बीजापुर से डटकर दो लडाइयाँ लडी। परन्तु, उनका अच्छा फल उसे नही मिला। उसे मगलविदेह और पल्टन के किले भी खाली कर देने पडे और वह परेण्डा से १८ मील उत्तर-पूर्व मे घूम नामक स्थान पर धकेल दिया गया। अब बीजा-पुर के किलो मे से एक भी उसके अधिकार मे न था। वह हताश होकर सीधा औरगाबाद लौट गया। इस प्रकार बीजापुर का यह अभियान एक प्रकार से विफल ही हुआ, अपरिमित धन-हानि होने और इस करारी हार की सूचना पाने से औरगज़ेब जयसिह से बहुत नाराज हो गया और उसे हुक्म दिया गया कि वह शाहजादा मुअज्जम को दक्षिण की सूबेदारी के अधिकार सौपकर वहा से चला आए। अपमान से क्षुब्ध और निराशा से भरे हुए जयसिह ने आगरे की ओर कूँच किया। बीजापुर के अभियान मे उसका एक करोड रुपया अपना निजी खर्च हुआ था, जिसमे से एक पैसा भी उसे वापस नही मिला। अपमान और निराशा ने उसका दिल तोड दिया और २८ अगस्त, १६६७ को बुर-हानपुर मे वह मर गया।

सच पूछा जाय तो जयसिह को पूर्ण युद्धकौशल काम मे लेने का अवसर ही नही मिला था। उसके पास सेना अनुपयुक्त एव अपर्याप्त थी और युद्ध व खाद्य-सामग्री भी बहुत कम थी। घेरा डालने के योग्य एक भी तोप उसके पास न थी।

घरेलू सैनिक विद्रोह ने बीजापुर महाराज्य की कमर तोड दी थी। राजकीय सत्ता के निर्बल हो जाने पर सारा राज्य सैनिक जागीरो मे बँट गया था और महत्त्वपूर्ण पदो और अधिकारपूर्ण कार्यो को लालची सेनापतियो ने आपस मे बाँट लिया था, जिससे राज्य की सारी सत्ता इनके हाथ मे थी। ये सैनिक चार विभिन्न जाति के थे। एक अफगान थे—जिनकी जागीरे पश्चिम मे कोकण से लेकर नेकापुर तक फैली

थी। दूसरे हब्शी थे—जो पूर्व मे करनूल परगने और रायचूर दुआब के एक भाग वाले प्रदेश पर शासन करते थे। तीसरे महदवी सम्प्रदाय के सदस्य थे। चौथे नवागत अरब मुल्ला थे—जिनकी जागीरे कोकण मे फैली हुई थी। राज्य के हिन्दू पदाधिकारी और आश्रित हिन्दू राजाओ की गणना दलित जातियो मे होती थी। राज्य पर अधिकार रखने वाले ये सारे ही राजकीय अधिकारी विदेशी थे, जो यही बसकर वश-परम्परागत सामन्त-सरदार बन बैठे थे। प्रत्येक दल वाले अपनी ही जाति मे विवाह करते थे, जिससे वे यहाँ की स्थानीय आबादी मे सम्मिलित नही हो सके, और न विदेशी शासक अधिकारियो का यह दल कभी राज्य-शासन का अविभाज्य अग बन सका। उनका एकमात्र उद्देश्य निजी स्वार्थ था। उनमे देशभक्ति की भावना न थी, क्योकि वह देश उनका अपना न था। वे राजनीतिक खानाबदोश थे।

मुहम्मद आदिलशाह के शासनकाल मे बीजापुर राज्य का विस्तार चरम सीमा पर पहुच चुका था। अरब सागर से बगाल की खाडी तक सारे भारतीय प्रायद्वीप मे वह फैला हुआ था। उसकी वार्षिक आय ७ करोड ८४ लाख रुपये थी। इसके अतिरिक्त अधीन ज़मीदार और राजाओ से सवा पाच करोड रुपयो की रकम टाँके मे मिलती थी। उसकी सेना मे ८० हजार घुडसवार, ढाई लाख पैदल और ५३० लडाकू हाथी थे।

सन् १६७२ मे अली आदिलशाह द्वितीय मर गया और उसके साथ ही बीजापुर राज्य का सारा गौरव भी लुप्त हो गया। हब्शी खवासखाँ ने राज्य-सत्ता हथिया ली और आदिलशाह वश के अन्तिम सुलतान बालक को राज्य-सिहासन पर बैठाकर मनमानी करने लगा। भूतपूर्व वजीर अजीर मुहम्मद खिन्न होकर दरबार से चला गया और राजतन्त्र का तेजी से पतन होने लगा।

३७

अर्द्धरात्रि की सभा

अर्द्धरात्रि व्यतीत हो रही थी। राजगढ मे एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण राज-सभा का अधिवेशन हो रहा था। शिवाजी के सभी मुख्य राजकर्मचारी, मन्त्री, सेनापति, न्यायशास्त्री उपस्थित थे। तानाजी मलूसरे ने आँखो मे आँसू भरकर तलवार पर हाथ पटककर कहा—"हाय महाराज, हिन्दू-गौरव की रक्षा के लिए वर्षो से हमने नीद और भूख तथा दु सह कष्टो की परवाह न कर जो कर्तव्य-पालन किया, वह सब आज विफल हो गया।"

"निष्फल नही हो रहा वीरवर, सफल हो रहा है। हम स्वप्न से सत्य-जगत् मे आए है।"

"परन्तु आप आत्मसमर्पण कर दिल्लीश्वर को सलाम करने जा रहे है।"

"आत्मसमर्पण केवल शिवा ने किया है, मराठो ने नही। मेरे आत्म-समर्पण का लाभ उठाकर तुम अपनी तलवारो की धार और तेज कर लो। आज मै दिल्ली जा रहा हूँ। कल उनकी जरूरत पडेगी। पेशवा, तुम क्या कहते हो ? क्या मै दिल्ली न जाऊँ ?" शिवाजी ने अपने बाल-सखा और मन्त्री सोमेश्वर से पूछा।

"जाइए महाराज, किन्तु यह न भूलिए कि सह्याद्रि के उत्तुग शैल आपके लौटने की बाट देखते रहेगे और हम कान खडे करके सह्याद्रि की घाटियो मे गूज उठने वाली ध्वनि की प्रतीक्षा करेगे कि हिमालय से कन्याकुमारी तक हिन्दू राज्य की स्थापना के लिए छत्रपति ने अपनी तलवार म्यान से बाहर कर ली है।"

शिवाजी ने लाल-लाल अगारे के समान नेत्रो से अपने चारो ओर देखा और कहा—यह 'भवानी, की तलवार है। महाराज जयसिह वृद्ध

हैं, वीर हैं, हिन्दू है। मै उनपर तलवार नही उठा सका। उनपर श्रद्धा के फूल बिखेर आया हू। निस्सदेह उनका जीवन मुगलो की दासता मे व्यतीत हुआ है परन्तु उनका क्षत्रियत्व और तेज कायम है। मैने उनकी सीख मानकर केवल अपमानित होने का खतरा उठाया है। पर याद रखना, इसकी मैं बडी से बडी कीमत लेकर वापस लौटूगा। वचन दो कि लौटकर आने पर तुम्हारी तलवारे तैयार मिलेगी।"

"अवश्य महाराज, हमारी तलवारे कभी म्यान मे नही होगी।"

"तो मित्रो, हमने महाराज जयसिह से सन्धि की है। हमारे और कपटी औरगज़ेब के बीच वह वृद्ध राजपूत है, जिसकी तलवार की धार अटक से कटक तक प्रसिद्ध है। उन्होने मुझसे कहा था कि जब सत्य से हिन्दू धर्म की रक्षा न हुई तो सत्य छोडने से कैसे होगी। वह बात मैंने गाठ बाघ ली है और तब तक मैं सन्धि से बद्ध हू, जब तक शत्रु सन्धि भग न करे।"

"महाराज, यदि औरगजेब ने आगरा मे आपके साथ दगा की, सन्धि भग की, आपको बन्दी किया ?"

"भवानी के आदेश से मैं आगरा जा रहा हू। भवानी का जो आदेश होगा, वह करूगा। तुम डरते क्यो हो, अन्ताजी। यदि औरगजेब ने दगा की तो मराठो की नलवारे भी ठण्डी नही हो गई हैं। वह आग बरसेगी कि दिल्ली और आगरा जलकर क्षार हो जाएगा। अन्ताजी, आबाजी, स्वर्ण-देव और मोरेश्वर ! मै कुल राज्य का भार आप लोगो पर छोडता हू। आप मेरे लौटने तक राज्य-व्यवस्था तथा शासन कीजिए। और तानाजी, तुम अपने तीन सौ चुने हुए मराठो के साथ छद्म वेश मे मुझसे प्रथम आगरा मे जा पहुचो तथा बिखरकर भिन्न-भिन्न स्वरूपो मे रहो तथा बादशाह और उसके दरबार की गतिविधि देखो। मेरे साथ पुत्र शभाजी, तीन मन्त्री और एक सहस्र सवार रहेगे। उन सवारो को चुन दो।"

३८

प्रस्थान

कूच-दर-कूच करते जब शिवाजी आगरा से केवल एक मजिल ही दूर रह गए, तो भी कोई बडा सरदार उनकी अगवानी को हाजिर नही हुआ। यह शिवाजी के प्रति एक असभाव्य अशिष्ट व्यवहार था। और शिवाजी इस बात से खिन्नमन आगरा की बात सोचने लगे। न जाने आगरा मे औरगजेब उनसे कैसा व्यवहार करेगा। मई के आरम्भिक दिन थे। दो प्रहर होते-होते प्रचण्ड गर्मी हो जाती थी। शिवाजी वहा दिन-भर पडाव डाले पडे रहे। सायकाल तक भी उनकी अगवानी को कोई नही आया, तो वे अत्यधिक अधीर और क्रुद्ध हुए। इस समय उनके साथ एक हजार शरीर-रक्षक सवार तथा तीन मन्त्री थे। परन्तु वे अपने मन की बात किसीसे कहना न चाहते थे। उनके ललाट पर चिन्ता की रेखाए पडी थी, तथा मुख गम्भीर हो रहा था। वे धीरे-धीरे टहल रहे थे और अपने ६ बरस के पुत्र शम्भाजी से बीच-बीच मे बात भी करते जाते थे। बालक शम्भाजी को आगरा और बादशाह को देखने की बडी उत्सुकता थी। उसने पूछा—"बापू, दादाजी भाऊ कहते है, बादशाह बहुत बडा आदमी है। क्या वह हमारे हाथी से भी बडा है?"

शिवाजी ने बालक के प्रश्न को सुनकर कहा—"नही बेटे, वह तो मेरी इस तलवार से भी छोटा है।"

"लेकिन बापू, फिर सब लोग उससे डरते क्यो है?"

"कौन डरता है?"

"दादाभाऊ कह रहे थे कि उसे सलाम करना होगा। उसके पास कोई नही जा सकता। वहा कटहरा लगा है। दूर से सलाम करना होगा। बापू, पास जाने से क्या वह काट खाता है?"

"अब तो हम आगरा आ ही गए है। चलकर देखेगे।"

"तो मेरी तलवार मुझे देना बापू, वह काटने लगेगा तो मैं उसके मुह मे तलवार घुसेड दूगा ।"

"ऐसा ही करना, बेटे। पर क्या कारण है कि आगरा से कोई उमराव नही आया ?"

"उमराव यहा क्यो आएगा ?"

"हमारे सत्कार के लिए। हम बिना उसके आगरा मे थोडे ही जा सकते है !"

"क्यो नही जा सकते है ? अपने दक्षिण मे तो हम चाहे जहा जा सकते थे ।"

"लेकिन बेटे, आगरा मे तभी जाएगे, जब कोई उमराव आएगा। पर अब तो सूर्यास्त हो रहा है। अभी तक कोई नही आया।"

इसी समय उन्होने देखा कि दो सवार घोडा दौडाते हुए आ रहे है। आगन्तुक की इत्तला सेवक ने दी कि महाराजा जयसिह के पुत्र कुवर रामसिह मुजरा करने पधारे है।

"कुवर रामसिह ?" शिवाजी की त्योरियो मे बल पड गए। "कुवर कौन ?"

"वे ढाई हजारी मनसबदार है।"

"और उनके साथ दूसरा सवार कौन है ?"

"एक राजपूत सैनिक है।"

"केवल सैनिक ?"

शिवाजी ने होठ चबाए। किन्तु फिर आहिस्ता से कहा—"आने दो।"

कुवर रामसिह ने आगे आकर शिवाजी को प्रणाम किया। फिर हसते हुए उनसे कुशल-मगल पूछा। यह भी कहा कि उनके पिता महाराज जयसिह ने लिखा है कि आगरा मे आपकी सब सुविधाओ और सुरक्षा का ध्यान रखू। अब आप जैसी आज्ञा देगे, वही मैं करूगा।

कुमार के उदार और निष्कपट व्यवहार को देख शिवाजी सन्तुष्ट हुए। उन्होने कुमार का आलिगन करके कहा—"मेरे आगरा चलने के

सम्बन्ध मे तुम्हारे क्या विचार हैं तथा बादशाह ने कैसा प्रबन्ध किया है ?"

"आपको किसी प्रकार की आशका करने की आवश्यकता नही है । मैं आपका सेवक अपने दो हजार राठौरो के साथ रकाब के साथ हू । परन्तु आश्चर्य है कि मुखलिसखा अभी नही आए ।"

"मुखलिसखा कौन है ?"

"शाही मनसबदार है ।"

"उसका मनसब कितना है ?"

"डेढ हजारी जात का ।"

"क्या कहा, डेढ हजारी जात का ?"

"जी हा, मुखलिसखाँ यू बादशाह के मुहलगे हैं ।"

"तो क्या आगरा मे हमारा स्वागत ठीक हो रहा है ?"

"महाराज, किसी बात की चिन्ता न करे । मैं आपकी सेवा मे उपस्थित ही हू ।" इसी समय मुखलिसखा भी आए । उनके साथ केवल दो सवार थे ।

शिवाजी ने इस सरदार की ओर देखकर कहा—"शक्ल से तो तबलची मालूम होता है । उसके दोनो साथी शायद महज़ सवार है ।"

"जी हा ।"

"तो बुलाओ उसे, देखूं क्या सुर्खी लाता है ।"

मुखलिसखा ने जरा अकडकर शिवाजी को यू ही सलाम किया और कहा—"हजरत बादशाह सलामत की ओर से मैं आपका आगरा मे स्वागत करता हू ।"

लेकिन शिवाजी ने उसकी बात पर ध्यान नही दिया, न कुछ जवाब ही दिया । वह मुह फेरकर रार्मासह से बाते करने लगे । उन्होने ज़रा मुखलिसखा को सुनाकर कहा—"ये मुखलिसखा कोई बहादुर आदमी हैं ?"

इसपर मुखलिसखा चिढ गया । उसने कहा—"क्यो जनाब, आप क्या आगरा मे बहादुरो की तलाश मे आए हैं ?"

"शायद, मैंने सुना था कि आगरा मे एक खेत है, जिसमे बहादुर पैदा होते हैं ।"

रामसिंह ने बात बढती देखकर कहा—"रात हो रही है। मेरी समझ मे तो अब हमे चलना चाहिए। कल बादशाह की सालगिरह का जुलूस है। उसमे आपको दरबार मे हाजिर होना होगा। कल ही दरबारे-शाही मे आप शहनशाह को सलाम करके खिलअत और मनसब हासिल कर लीजिए।"

"कुवर रामसिंह, मैं चाहता हू सब बातो पर अच्छी तरह विचार कर लिया जाए। बादशाह के मन मे कोई दगा हो तो मुझसे कह दो।"

"महाराज, प्रथम तो पिताजी की आज्ञा है, दूसरे हम राजपूत अपनी जान पर खेल जाएगे यदि आपका बाल भी बाका हुआ। आप इत्मीनान से आगरा पधारिए, असल बात यह है कि बादशाह ने आपको अपने मतलब से बुलाया है। वह आपकी खूब खातिर करेगा और आपकी सब इच्छाए पूरी करेगा।"

"लेकिन उसका मतलब क्या है ?"

"क्या पिताजी ने आपको नही बताया था ?"

"उन्होने कहा था कि बादशाह शाहे-ईरान पर चढाई करना चाहता है, और उसने तुम्हारी बहादुरी और दयानतदारी पर भरोसा करके उस चढाई मे सम्मिलित करने तुम्हे बुलाया है।"

"बस, तो समझिए बादशाह आपकी ज़ेरेकमान एक बडी फौज फारस की ओर भेजने का कस्द कर चुका है। आप, जैसी कि आशा है, यदि इस मुहिम मे कामयाब होगे, तो आपकी शोहरत और इज्जत दरबारे-शाही मे उसी रुतबे को पहुच जाएगी जिसपर मेरे पिता व महाराज जसवन्तसिंह जी की है।"

"खैर, तो तुम इस मनहूस भाड को मेरी आखो से दूर आगरा रवाना कर दो और मेरे हम-रकाब डेरे तक चलो।"

रामसिंह ने हसते हुए डेढ हजारी मनसबदार मुखलिसखा से कहा—"खा साहब, मै राजा साहब के हम-रकाब आगरा आ रहा हू। आप जल्दी आगरा तशरीफ ले जाकर यह खबर जहापनाह को पहुँचा दीजिए।"

"लेकिन यह तो कोई उजड्ड भूमिया मालूम होता है। क्या इस दहकानी को आप बादशाह सलामत के रूबरू ले जाएगे ?"

"इस मसले पर बाद मे गौर कर लिया जाएगा। खा साहब, आप आगे चलकर इत्तला कर दीजिए।"

"या वहशत, क्या खौफनाक आखे हैं जैसे इन्सान को जिन्दा निगल जाएगी।"

रामसिंह ने हसकर कहा—"कुछ डर नही है खा साहब, आप जल्द कूच कीजिए। घडी-भर मे हम लोग भी रवाना होते है।"

खाँ ने और उज्र नही किया। उछलकर घोडे पर चढा और घोडा आगरा की ओर गर्द उडाता दौड चला।

३९

आगरा

उन दिनो का आगरा आजकल के आगरा से भिन्न था। बहुत-सी बातों मे वह दिल्ली से बढा-चढा था। दिल्ली आगरा की अपेक्षा नौ-आबाद थी। जिस काल की बात इस उपन्यास मे है, उस समय दिल्ली को बसे अभी ४० ही साल हुए थे। आगरा की गर्मी से घबराकर शाहजहा ने दिल्ली की नई बस्ती बसाई थी जो शाहेजहानाबाद कहाती थी। पुरानी दिल्ली के इस समय भी मीलो तक खण्डहर फैले हुए थे और सब सरकारी इमारते, तथा लाल किला तक उन पुराने खण्डहरो से ईंट-पत्थर आदि लेकर बसाई गई थी। दिल्ली का निर्माण अब तक भी चल ही रहा था। वह शहर यमुना किनारे एक चौरस मैदान मे अर्द्ध चन्द्राकार बसा था जिसके पूर्वी दिशा मे यमुना थी जिसपर नावो का पुल था और तीनो ओर पक्की शहरपनाह थी जिसमे सौ-सौ कदमो पर बुर्ज बने हुए थे। बीच-बीच मे कच्चे पुश्ते भी थे। यह शहर मुश्किल से तब दो-ढाई मील के घेरे मे आबाद था जिसमे बीच-बीच मे बागात और मैदान भी थे। परन्तु आगरा दिल्ली की अपेक्षा बडा शहर था। अब तक भी वह बादशाहो का मुख्य

निवास-स्थान रहा था। राजाओ और अमीरों की यहा बडी-बडी हवेलिया थी। बीच-बीच मे सुन्दर पक्की सराये और धर्मशालाए थी, जो सार्वजनिक उपयोग मे आती थी। इसके अतिरिक्त ताजमहल और अकबर के सिकन्दरे के कारण इसकी विशेषता बहुत बढ गयी थी। परन्तु आगरा के चारो ओर शहरपनाह नही थी। न इसमे दिल्ली की भाति पक्की साफ-सुथरी सडके ही थी। कुल चार-पाच बाजार थे, जिनमे व्यापारी लोगो ही की बस्ती थी। बाकी सब छोटी-छोटी गलिया थी। जब बादशाह आगरा मे रहता था तो इन गलियो मे आने-जाने वालो की बडी भीड जमा हो जाती थी और खूब धक्कम-धक्का होती थी। अमीर और साहूकारो ने अपने मकानो के सहन मे सायेदार वृक्ष लगवाए थे, जिसके कारण आगरा का दृश्य देहाती-सा तो जरूर दीख पडता था परन्तु बहुत सुहावना मालूम देता था। बनियो की हवेलिया बीच-बीच मे गढी जैसी ज्ञात होती थी।

१२ मई का प्रभात बहुत सुन्दर था। इस दिन आगरा शहर और दरबारे-शाही की सजावट खास तौर पर की गई थी क्योकि इस दिन बादशाह की ५०वी वर्षगाँठ थी। शहर और किले मे जश्न मनाए जा रहे थे, सडको पर भारी भीड थी, गर्द दबाने के लिए सडको पर दबादब छिडकाव किया जा रहा था और उस गर्म प्रभात मे मिट्टी पर पानी पडने की सोधी सुगन्ध वातावरण मे भर रही थी। किले के बाहरी फाटक से ही दरबारहाल तक सैनिक पक्तिबद्ध खडे थे। उनके हाथो मे छोटी-छोटी बन्दूके थी जिनपर लाल रग की कनात की खोल चढी हुई थी। पाच-छ सवार अफसर किले के फाटक पर भीड-भाड जमा होने से रोक रहे थे और लोगो को हटाकर रास्ता साफ कर रहे थे।

बादशाह की सवारी पालकी पर निकली। पालकी पर आसमानी कमखाब के पर्दे पडे थे। डडो पर सुर्ख मखमल चढी थी। उसे आठ चुने हुए तथा भारी वर्दी वाले कहार कधो पर उठा रहे थे। पीछे बहुत-से अमीर थे—कोई घोडे पर, कोई पालकी पर। इन्हीके साथ

मनसबदार और चाँदी की छडियाँ लिए हुए चौबदार भी थे ।

शहर से किले तक की सडक खचाखच भरी थी । किले के सामने वाले चौक मे अमीर, राजे, मनसबदार, जो दरबार मे हाजिर होने को आए थे, टाठ से घोडे पर आगे बढ रहे थे । उनके घोडे सजे हुए थे और प्रत्येक के साथ कम से कम चार खिदमतगार दौड रहे थे और भीड-भाड मे अपने मालिक के लिए राह बना रहे थे । कुछ अमीर और राजे हाथियो पर आए थे, कुछ पालकियो पर जिन्हे छ कहार कन्धो पर उठा रहे थे । ये अमीर निरन्तर पान खा रहे थे । उनके बगल मे एक खिदमतगार चादी का उगालदान लिए हाजिर था जिसमे वे कभी-कभी पीक गिरा देते थे । दूसरी ओर दो नौकर मक्खियो और धूल से मालिक को बचाने के लिए उनके सिरो पर मोरछल फेर रहे थे । तीन-चार प्यादे आगे-आगे लोगो को हटाते चल रहे थे । शोर बहुत था । सिपाही लोग जोर-जोर से चिल्लाकर लोगो को हटाते थे ।

शिवाजी के लिए यह सब कुछ निराला दृश्य था । इतनी भीड-भाड और अव्यवस्था मे उनका दम घुट रहा था । वे भी अपने दस सरदारो और पुत्र शम्भाजी सहित किले मे आगे बढते जाते थे । कुवर रामसिह उनके घोडे के साथ था और सब प्रश्नो का उत्तर देता जा रहा था ।

अब वे किले के भीतरी फाटक तक जा पहुचे । सामने एक लम्बी सडक चली गई थी । यहा उमरा लोग सजे-धजे कक्षो मे पहरा-चौकी दे रहे थे । बडे-बडे दीवानखाने और उनके आगे के बागो की शोभा देखकर वे हैरान हो रहे थे । इन खेमो मे बेशुमार रुपया सिर्फ सजावट के काम मे ही खर्च किया गया था । उनमे चिकनदोज और जरदोजी का काम हो रहा था । सुनार, दर्जी, चित्रकार, नक्काश, रङ्गसाज, बढई, खरादी, दर्जी, मोची, कमखाब और मखमल बुननेवाले जुलाहे छोटी-छोटी कोठरियो मे बैठे अपने-अपने काम कर रहे थे ।

यहा से आगे खासोआम की इमारत थी जो महराबों पर खडी

थी। महराबे ऐसी बनी थी कि एक महराब से दूसरी मे जाया जा सकता था। इसके सामने वाले दरवाजे के ऊपर बालाखाना बना हुआ था जिसमे शहनाई, नफीरिया और नगाडे बज रहे थे। दस-बारह नफीरिया और इतने ही नक्कारे एक साथ बज रहे थे। सबसे बडी नफीरी ६ फुट लम्बी थी। नक्कारे लोहे या पीतल के थे जिसकी गोलाई ६ से ८ फुट तक थी। उनका शोर इतना था कि कान बहरे हो रहे थे। दूर से अवश्य यह सुरीले लगते थे।

४०

बादशाह के रूबरू

आमखास मे दरबार लगा था। आज सालगिरह का दरबार था। अत. बडी तडक-भडक से सजाया गया था। दीवाने-खास के बीचोबीच शहनशीन पर बादशाह का प्रसिद्ध तख्तताऊस रखा था जिसपर बादशाह बैठा था। उसके दाये-बाये शहजादे खडे थे। ख्वाजा सरा मोरछल हिला रहे थे। बहुत-से गुलाम शाही हुक्म बजा लाने को हाथ बाधे पीछे कतार मे खडे थे। तख्त के नीचे चादी का जगला लगा हुआ था जिसमे उमरा, राजे और राजाओ के प्रतिनिधि हाथ बाधे खडे थे। सबकी निगाहे नीची थी, तख्त से कुछ दूर हटकर मनसबदार या छोटे उमरा खडे थे। बीच का थोडा-सा स्थान खाली था। लोगो के सलाम व मुजरे चल रहे थे। बीच-बीच मे नजरे और भेट मे आई विविध बहु-मूल्य वस्तुए बादशाह की नजर के सामने लाई जा रही थी। बादशाह के मुह से कोई शब्द निकलता था तो दरबार के बडे-बडे उमरा करामात' 'करामात' का मर्मर शब्द करते थे और 'सुबहानअल्लाह, क्या इर्शाद हुआ है' कहते थे।

बादशाह ने भी खूब तडक-भडक की पोशाक पहनी थी। उसके

शरीर और पगडी पर बहुमूल्य रत्न चमक रहे थे। उसके कण्ठ मे जो मोतियो की माला लटक रही थी, वह नाभि तक पहुच रही थी। उमरा लोगो की पोशाके भी बहुमूल्य थी।

आमखास के बाहर एक बडा खेमा लगा था, जो सहन मे आधी दूर तक फैला हुआ था। यह चारो ओर से चादी के पत्तरो से मढे हुए कटहरे से घिरा था। वहा बहुत देर तक शिवाजी को बादशाह के रूबरू जाने से प्रथम प्रतीक्षा मे खडा रहना पडा। इसके बाद वजीरे-आजम का सकेत पाकर कुवर रामसिह उन्हे दरबार मे ले गए। तख्त के सामने नीचे एक चौकी थी। उसपर भी चादी का कटहरा लगा था और ऊपर जरी की झालर का एक बडा चदुआ तना था। वहा के खम्भे भी जरी के कपडे से मढे थे। फर्श पर कीमती कालीन बिछे थे। यही लाकर शिवाजी और शम्भाजी को खडा किया गया। शिवाजी ने यहा खडे होकर तीन बार ज़मीन तक झुककर और हाथों को माथे से लगाकर शाही तरीके से बादशाह को सलाम की। और एक हज़ार मुहर नजर गुजारी तथा ५ हजार रुपये न्यौछावर किए। बादशाह ने एक बार नजर उठाकर शिवाजी की ओर देखा। एक कुटिल मुस्कान के साथ उसने आहिस्ता से कहा—"खुश आमदीद शिवाजी राजे," और उनकी ओर से आखे फेर ली। अब वजीरे-आजम के सकेत से उन्हे तख्त के सामने ले जाकर पचहजारी मनसबदारो की पक्ति मे खडा कर दिया।

दरबार का काम चलता रहा और सब कोई शिवाजी को जैसे बिल्कुल ही भूल गए।

शिवाजी का मन दुख, सदेह और क्षोभ से भर गया। वह पहले ही इस बात से खीझ रहे थे कि उनके आगरा पहुचने पर आगरा से बाहर आकर किसी बडे उमराव ने उनका स्वागत नही किया। सिर्फ कुवर रामसिंह जो ढाईहजारी मनसबदार था और मुखलिसखा डेढ-हजारी मनसबदार—इन दो मध्यम श्रेणी के उमरावो ने कुछ ही दूर आगे

बढकर शिवाजी की अगवानी की थी। दरबार मे भी उन्हें पाचहज़ारी मनसबदारो की पंक्ति मे खडा किया गया था। सालगिरह के उत्सव के पान सब उमरावो को दिए गए, लेकिन शिवाजी को पान भी नही मिला। जलसे की खिलअतें और सिरोपाव शाहज़ादो, वज़ीर ज़फरखा और महाराज जसवन्तसिंह को दिए गए, शिवाजी को खिलअत भी नही मिली। उधर घण्टे-भर से खडे रहने के कारण वे थक गए थे और इस अपमान से, गुस्से से लाल हो उठे। औरगज़ेब की नज़रो से यह छिपा न रहा, तब उसने रामसिह से कहा कि शिवाजी से पूछो कि उनकी तबियत कैसी है। कुवर शिवाजी के पास आया, तब शिवाजी ने गुस्से से लाल होकर कहा—"तुमने देखा है, तुम्हारे बाप ने देखा है। क्या मै ऐसा आदमी हू कि जानबूझकर मुझे यो खडा रखा जाए ?" फिर उन्होने चिल्लाकर कहा—"ये कौन है जो औरत के समान गहने पहनकर मेरे आगे खडे हैं। वे मुझसे ज्यादा इज्जत रखते हैं तो युद्धक्षेत्र मे अपनी योग्यता प्रकट करे। मैं यह शाही मनसब छोडता हू।"

वे मुडकर बादशाह की तरफ पीठ करके वहा से चल दिए और जाकर एक ओर बैठ गए। रामसिंह ने उन्हे समझाया लेकिन उन्होंने एक न सुनी और कहा—"मेरा सिर काटकर ले जाना चाहो तो ले जा सकते हो लेकिन मैं बादशाह के सामने अब नही आता। मुझे जान-बूझकर बादशाह ने जसवन्तसिह के नीचे खडा किया है, इसलिए मैं सिरोपाव भी नही पहनता।"

बादशाह ने मुल्तफितखा, आकिलखा और मुखलिसखा को समझाने-बुझाने भेजा, परन्तु शिवाजी टस से मस न हुए। तब बादशाह ने रामसिंह को हुक्म दिया कि वह उसे डेरे पर ले जाकर समझा-बुझाकर शान्त करे। रामसिह उन्हे अपने साथ ले गया।

भी वध हुआ था अतः उसने बहुत रो-पीटकर बादशाह की इस आज्ञा का विरोध किया और बादशाह का इरादा बदल दिया। परन्तु शिवाजी तो अब दक्षिण से चल चुके थे। राह-खर्च का एक लाख रुपया अब उन्हे दिया जा चुका था। अत. शिवाजी को बीच मे नही रोका जा सकता था। औरगजेब ने अब यही निर्णय किया था कि आगरा आने पर या तो उन्हे मरवा डाला जाए या कैद कर लिया जाए। इसी-से उसने दरबार मे उनकी अवज्ञा की थी। पर उसे यह गुमान भी न था कि वह भरे दरबार मे इस प्रकार से दरबारी अदब को भग करेगे। अब उसने अपने इस इरादे को निश्चय मे बदल दिया कि खतरनाक दुश्मन को अब ज़िदा आगरा से बाहर न जाने दिया जाए।

४२

शेर पिजरे में

सालगिरह के दरबार के बाद सबको यह आशा थी कि शिवाजी शान्त होकर दरबार मे आएगे और बेअदबी के लिए क्षमा मागकर और खिलअत पहनकर देश को लौट जाने के लिए रुखसत को अर्ज़ करेगे। लेकिन शिवाजी ने दरबार मे आने से कतई इन्कार कर दिया। बहुत कहने-सुनने पर अपने पुत्र शम्भाजी को रामसिह के साथ भेजा। शाही दरबार का अदब भग हो जाने और शिवाजी की इस दबग कार्यवाही ने आगरा मे तहलका मचा दिया। महाराज बलवतसिंह जयसिह के प्रतिद्वन्द्वी थे। उन्होने और दूसरे उमरावो ने शिवाजी के विरुद्ध बादशाह के कान भरे। सब बातो पर विचार करके बादशाह ने हुकम दिया—"खत लिखकर महाराज जयसिह से पूछा जाए कि उन्होने क्या कौल-करार करके और क्या वायदे करके और सौगन्ध खाकर आगरा भेजा था। जब तक वहा से जवाब आए, शिवाजी को आगरा के

किलेदार राव अन्दाजखा को सौप दिया जाए।" लेकिन रामसिंह ने इसका विरोध किया और उसने वजीर आमिनखा से कहा—"मेरे पिता के वचन पर शिवाजी आगरा आए है, मैं उनकी जान का जामिन हू। पहले बादशाह हमको मार डाले और उसके बाद जो जी मे आवे, करे।"

यह सुनकर बादशाह ने हुकम दिया कि शिवाजी को रामसिंह के सुपुर्द कर दिया जाए और उससे मुचलका लिखा लिया जाए कि यदि शिवाजी भाग जाय या आत्मघात कर ले तो उसके लिए रामसिंह जवाबदार होगा। परन्तु इतना होने पर भी बादशाह ने शहर कोतवाल सिद्दी फौलादखा को हुक्म दिया कि शिवाजी के डेरे के चारो तरफ तोपे रखवाकर शाही फौजे बैठा दी जाए और डेरे के अन्दर आमेरी सेना के तीन-चार अफसरो और कछवाही फौजो का पहरा लगा दिया जाए। इस प्रकार शिवाजी को आगरा मे कैद कर लिया गया।

४३

ताजमहल का कैदी

आज तो आगरा का ताज विश्व का दर्शनीय स्थान बना हुआ है। पर उन दिनो सिवाय शाही परिवार और बडे-बडे उमरावो के कोई ताज मे नही जा सकता था। न आज जैसी चौडी सडके और प्रशस्त लॉन उन दिनो ताजमहल के आसपास थे। आगरा से पूर्वी दिशा मे एक लम्बा पथरीला मार्ग चला गया था जो क्रमश ऊचा होता जाता था। उसके एक ओर एक बडे बाग की चहारदीवारी थी, जो ऊची और लम्बी दूर तक चली गई थी। उसके दूसरी ओर नये बने हुए मकानो की एक पक्ति चली गई थी जिनमे दुहरी महराब बनी हुई थी। इस दीवार के आधी दूर तक पहुचने पर दाहिनी ओर एक बडा फाटक था जो बहुत

शानदार था। वह वास्तव मे एक बडी सराय का फाटक था जो हाल ही मे बनकर तैयार हुई थी। उसके सामने ही उस दीवार मे एक दूसरा फाटक था जिसे पार करके एक छोटा-सा बाग और एक आलीशान इमारत नजर आती थी। इमारत बहुत सुन्दर थी। इसीमे शिवाजी को डेरा दिया गया था।

शिवाजी ने वजीरे-आजम जफरखा और दूसरे बडे-बडे उमरावो को घूस देकर अपने छुटकारे की सिफारिशे बादशाह से कराईं। पर बादशाह को बेगम शाइस्ताखा निरन्तर शिवाजी द्वारा सूरत के बन्दरगाह की लूट और अपने पति को घायल करने की याद से उत्तेजित करती रहती थी। उसने कोई सिफारिश नही सुनी। शिवाजी ने बादशाह के सामने भी बहुत-से कौल-करार लिख भेजे, पर बादशाह ने उनपर भी कान नही दिया। अन्तत शिवाजी अब अपने जीवन से निराश हो गए। दक्षिण मे जब आगरा मे होने वाली इन दुर्घटनाओ का विवरण जयसिंह ने सुना तो वह बडी दुविधा मे पड गया और उसने अपने पुत्र रामसिंह को बारबार आदेश दिया कि हम राजपूत है और हमारे किए कौल-करार और शिवाजी को दिए आश्वासन झूठे न होने पाए तथा शिवाजी की जान पर भी कोई खतरा न आने पाए, इसका पूरा ख्याल रखना।

४४

डच गुमाश्ता

उन दिनो आगरा मे डचो की एक कोठी थी जिसमे उस समय चार या पाच डच अधिकारी रहते थे। ये लोग बानात, छोटे-छोटे शीशे, सादे और सुनहरी तथा रुपहली लेस, और छोटे-मोटे लोहे के सामान बेचते थे तथा नील खरीदकर अपने देश को भेजा करते थे। उन दिनो आगरा के आसपास नील की बहुत खेती होती थी और डचो के बहुत-से एजेण्ट

देहातो मे घूम-फिरकर नील खरीदा करते थे। डचो की एक कोठी बयाना मे भी थी जो यहा से सात-आठ मील के अन्तर पर थी। वहा देहातो से खरीदा हुआ नील जमा होता था। जलालपुर और लखनऊ से भी वे लोग नील खरीदते थे। वहा भी उन्होने एक-एक डिपो बना रखा था जहा भारतीय गुमाश्ते-कारिन्दे रहते थे। उन दिनो आर्मीनियन लोग भी आगरा के आसपास यही धन्धा करते थे और दोनो दलो मे खूब व्यापारिक सघर्ष चलता था।

कुछ दिनो से एक ठिगने कद का मजबूत-सा आदमी गुमाश्ता होकर डचो की कोठी मे आया है। शहर के एक बडे सरदार की सिफारिश पर बहाल हुआ है। यह अपेक्षाकृत सस्ते भाव मे उन्हे नील सप्लाई करता है। आदमी मुस्तैद और सच्चा है तथा आगरा का निवासी नही है। उसने इस बार आगरा के देहातो से नील एकत्र करने का ठेका लिया है और उसे तथा उसके आदमियो को डचो ने शाही परवाने अपनी जमानत पर ला दिए है तथा वह व्यक्ति अपने आदमियो के साथ यही रहता है। उसकी कार्यकुशलता और मुस्तैदी से डच बहुत खुश हैं। उसके आदमी कभी-कभी डचो से आईने, लेस और दूसरी चीजे खरीदकर भी मुफस्सिल मे बेचते हैं। गुमाश्ते का नाम मानिक है। कोठी के मैनेजर क्लोरिन साहब हैं। दोनो ही आदमी टूटी-फूटी उर्दू बोल सकते है।

मानिक ने कहा—"आपने सुना हुजूर, एक मराठा सरदार बादशाह को सलाम करने आया है। यह वही सरदार है जिसने जहापनाह के मामू का अगूठा काट डाला था और सूरत मे लूट की थी।"

"ओह ! हा, हम उसे जानता है, वो डाकू-सरदार है।"

"लेकिन साहेब, रुपया उसके पास खूब है। वह खुले हाथो खर्च करता है। आगरा वालो की तरह कजूस नही है।"

"तो बाबा, तुम क्या चाहते हो ?"

"साहेब, हमारे पास जो बडे-बडे आइनो और बानात का नया

चालान आया है, यह हम उसे अच्छे मुनाफे मे बेच सकते है। आप एक परवाना-शाही मगा दे तो मैं उस बेवकूफ सरदार से अच्छा नफा कमा सकता हूँ।"

क्लोरिन ने हसते हुए कहा—"अच्छा, अच्छा, परवाना हम मगा देते है। हमारे पास बढिया किसिम का मखमल भी है। ज्यादा मुनाफा कमाओगे तो बोनस मिलेगा।"

क्लोरिन साहेब ने शाही परवाना आसानी से ला दिया और मानिक गुमाश्ता बहुत-सा विलायती सामान लेकर शिवाजी के निवास-स्थान पर पहुचा। शिवाजी तानाजी मलूसरे को पहचानते ही खुशी से उछल पडे। पर तानाजी ने सकेत से उन्हे चुप रहने को कहा और सामान खोल-खोलकर मोल-भाव करने लगे। बीच-बीच मे काम की बातें भी होती रही।

शिवाजी ने कहा—"बुरे फसे तानाजी, कहो क्या करना है?"

"चूहेदानी से निकलना होगा। आप यह बानात का थान देखिए। बहुत बढिया है।" उन्होने थान फैला दिया।

थान को उगलियो से टटोलते हुए शिवाजी ने कहा—"लेकिन चूहे-दानी से कैसे निकलना होगा?"

"उसका उपाय किया जाएगा। पहले जो लोग बाहर है, उन्हे यहा से निकालिए।

" यह आईना भी मुलाहिज़ा फरमाइए।"

आईने को एक ओर धकेलते हुए शिवाजी ने कहा—"आईना रहने दो, तुम्हे जो कहना हो कहो।"

"महाराज, बादशाह से कहिए कि मुझे और मेरे पुत्र को यहाँ रहना ही है तो मेरे सरदारो और सिपाहियो को यहा से रवाना कर दे। आशा है, मूर्ख बादशाह खुशी से मजूर कर लेगा।"

"फिर तो मैं अकेला रह जाऊगा।"

"महाराज, तानाजी छाया की तरह आपकी सेवा मे है। चिन्ता न

कीजिए । सिपाहियो के रहते आपके निकलने मे बाधा होगी ।"

"ठीक है, उसके बाद ?"

"उसके बाद आप बीमार हो जाइए । मुलाकात बन्द कर दीजिए । लाइए, थान के दाम दीजिए ।" उन्होने थान की तह करते हुए अशर्फियो लिए के हाथ फैला दिया । शिवाजी ने अर्शाफिया तानाजी की हथेली पर रखते हुए कहा—"रामसिह से मिलते रहो तथा दरबार मे और मित्रो को भी पैदा करो ।"

"महाराज जसवन्तसिह की हमपर कृपा है ।"

अर्शफिया परखते हुए तानाजी ने कहा और अपना सामान समेटकर चलते बने । बाहर आकर हसते हुए पहरेदारो की हथेली पर दो अशर्फिया रखते हुए उन्होने कहा—"अमल-पानी के लिए रख लो । महाराज से मुनाफे का सौदा हुआ है । फिर आऊगा तो और इनाम दूगा ।"

पहरेदार खुश हो गए । तानाजी वहा से नौ-दो ग्यारह हुए ।

४५

काटे से काटा

अब दो धूर्त कूटनीतिज्ञो की राजनैतिक शतरजो की चाले चलनी आरम्भ हुई । औरगज़ेब जैसा सुभट साहसी योद्धा था, उसका सामना करने वाले बीर तो राजपूतो मे थे परन्तु उस जैसे कुटिल धूर्त की धूर्तता से समता करने वाला कोई हिन्दू सरदार न था । शिवाजी ही ऐसे पहले हिन्दू थे जो काटे से काटा निकालने मे चतुर थे । औरगज़ेब ने शिवाजी को आगरा मे बुलाया, अपमान किया और कैद कर लिया । सम्भवत वह उन्हे मार भी डालता ।

कुछ दिन चुप रहने के बाद शिवाजी ने अपने पुत्र शम्भाजी को दरबारे-शाही मे एक अर्जी देकर कुवर रामसिह के साथ भेजा । अर्जी

मे लिखा था कि बादशाह यदि मुझे आगरा मे अभी रोक रखना ही चाहते है तो मेरी सेना और सरदारो को वापस देश भेज दिया जाए क्योकि मैं अब शाही सुरक्षा मे हूँ। मुझे सेना की तथा सरदारो की आवश्यकता नही है। इसके अतिरिक्त मेरे पास इतना खर्च भी नही है कि आगरा मे उन्हे रख सकू। मैं बादशाह को भी खर्च के लिए कष्ट देना नही चाहता।

औरगजेब ने शिवाजी की इस प्रार्थना को गनीमत समझा। उसने शिवाजी को असहाय करने के विचार से उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। सेना और सरदारो को महाराष्ट्र लौटने की आज्ञा दे दी गई।

शिवाजी ने अपने मुसलमान जेलर सिद्दी फौलादखा से दोस्ती गाठ ली। प्रतिदिन कोई नया तोहफा उसे भेट मे देते, खूब खुश होकर आगरा की तारीफ करते। उनकी बातचीत का अभिप्राय यही था कि यहा मै बहुत खुश हूँ। दक्षिण के सूखे पहाडो मे मैं लौटना नही चाहता।

फौलादखा की रिपोर्ट पर बादशाह भी सन्तुष्ट हो गया। शिवाजी पर से बहुत-सी पाबन्दिया हटा ली गई। पहरे की कडाई भी कम हो गई। कुछ दिन बाद शिवाजी ने एक और अर्जी बादशाह को भेजी, उसमे लिखा था कि मुझे अपने स्त्री-बच्चो को आगरा बुलाने की अनुमति दे दी जाए।

इससे बादशाह और भी निश्चिन्त हो गया, परन्तु अर्जी पर कोई हुक्म नही दिया। कुछ दिन बाद उन्होने लिखा—"मैं फकीर होकर किसी तीर्थ मे दिन व्यतीत करना चाहता हूं।" इसपर बादशाह ने हसकर जवाब दिया—"खयाल अच्छा है, फकीर होकर प्रयाग के किले मे रहो। बहुत बडा तीर्थ है। वहा मेरा सूबेदार बहादुरखा तुम्हे हिफाजत से रखेगा।"

परन्तु इसके बाद ही शिवाजी बीमार पड गए। बीमारी बढती ही गई। शाही हकीम आए, आगरे के नामी-गरामी हकीम आए, दवादारू चली मगर रोग को आराम न हुआ। बादशाह को आशा हुई कि यह पहाडी चूहा इसी बिल मे मर जाएगा। परन्तु शिवाजी न मरे, न अच्छे हुए।

शिवाजी ने नगर मे ढिंढोरा पिटवा दिया—शिवाजी मरहठा आगरा मे बहुत बीमार है। जो कोई उन्हे आरोग्य करेगा, उसे सोने से तोलदिया जाएगा।

दूर-दूर के हकीम बडे-बडे चोगे पहनकर और लम्बी-लम्बी डाढी फटकारकर आए, पर रोग अच्छा न हुआ। अन्तत एक निराला हकीम आया। हकीम की पालकी बडी शानदार थी। उसके कहार भी जर्क-बर्क थे। हकीम की सफेद डाढी नाभि तक लटक रही थी, किन्तु वह कद मे ठिगना था। उसके एक हाथ मे तस्वीर थी। उसने फाटक पर आकर सिद्दी फौलादखाँ से कहा—"अय नेकबख्त, सुना है कोई काफिर इस घर मे बीमार है। आराम होने पर वह सोने से हकीम को तोल देगा। काफिर को आराम करना शरअ के खिलाफ है, लेकिन जिस्म के वज़न के बराबर सोना भी कुछ मायने रखता है। मसलन ये चार अशर्फियां है। उन्हे तुम अपनी हथेली पर रखकर देखो और इनके असर से तुम्हारे दिल मे फायदा उठाने के खयालात पैदा हो तो उस काफिर के पास जाकर हमारी खूब बढा-चढाकर तारीफ करो और उसे हमारे इलाज के लिए रजामन्द करो। बस, तुम यह खबर लाओगे तो यह मेरी मुट्ठी की चार अशर्फियाँ तुम्हारी हथेली पर और पहुच जाएगी।"

आठ अशर्फियाँ देखकर फौलादखा पानी-पानी हो गया। उसने कहा—"हकीम साहेब, ये अशर्फिया भी मेरी हथेली पर रखिए और शौक से भीतर जाकर ऐसा इलाज कीजिए कि मर्ज़ रहे न मरीज।"

हकीम साहेब हस दिए—"भाई फौलादखा, जिन्दादिल आदमी हो। लो ये याकूती गोलिया। आज रात इनकी बहार देखना।"

इतना कहकर शीशी से निकालकर गोलिया और अशर्फियाँ हकीम साहेब ने फौलादखा की हथेली पर रख दी। फिर कहा—"अमा, इस काफिर के पास इतना सोना है भी या यूही बेपर की उडाता है?"

"है तो मालदार रईस। खुले दिल से खर्च करता है।"

"तब तो उम्मीद है मेरी आठ अशर्फियाँ मिट्टी मे न जाएगी।"

यह कहकर हकीम साहेब भीतर गए।

शिवाजी को उन्होने घूर-घूरकर देखा। फिर कहा—"काफिर का इलाज मुसलमान पर लाजिम नही है। मगर, ए हिन्दू सरदार! क्या सचमुच तेरे पास इतना सोना है जितना तूने देने का वायदा किया है ?"

शिवाजी हकीम की गुस्ताखी से एकदम नाराज हो उठे। उन्होने कहा—"सोना है, मगर मैं हिन्दू हू, मुसलमान की दवा नही खाऊगा। निकलो बाहर।"

लेकिन हकीम साहेब ने शिवाजी की ओर देखकर कहा—"अय नादान सरदार, मुझपर लाजिम है कि मैं तेरी जान बचाऊ।"

इतना कहकर पास बैठकर उन्होंने शिवाजी की नाडी पकड ली। शिवाजी कुछ देर चुप रहे। नाडी देखकर हकीम ने कहा—"सरदार, तुझे तकलीफ क्या है ?"

"सिर मे दर्द रहता है। बदन जलता है।"

यह तकलीफ बाजवक्त गुस्से की ज्यादती से पैदा होती है, बाजवक्त दिल की खराबी से। कभी ऐसा भी होता है कि वतन की याद से दिल की धडकने बढ जाती है जिनका दिमाग पर भी असर होता है।" इतना कहकर उन्होने दूसरी नब्ज पकडी और दिल पर हाथ रखा।

शिवाजी ने सोचा कि यह कम्बख्त क्या मेरे मन की बात समझ गया है। उन्होने गौर से हकीम साहेब के चेहरे को देखा। फिर कहा—"हकीम साहेब, ऐसा दीखता है कि मैं इस बीमारी मे मर जाऊँगा।" इतना कहकर उन्होने झटका देकर हाथ छुडा लिया।

हकीम साहेब डाढी पर हाथ फेरते हुए बोले—"अला-कला-उलाव लाम नून वे। हमारी पुश्तैनी किताब मे इस मर्ज का हाल दर्ज है। दिल के पास कुल कुला तुसा या काता हतारा रग होती है। उसकी फस्द खोलना होगा।"

"क्या दूसरा कोई इलाज नही है ?"

"बेत से पीटने से भी किसी कदर आराम हो जाता है। दुश्मन की

कैद से निकल भागने की जो कैदी तरकीब सोचा करते है, उन्हे भी यह मर्ज़ अक्सर होते देखा गया है। अब सरदार, क्या तुझे जागते हुए भी ख्वाब आते है और तू उन पहाड़ियो और दर्रों को देखता है जिनमे तूने अपना बचपन बिताया है ?"

शिवाजी चौक पडे। उन्होने कहा—"क्या यह भी कोई मर्ज है ?"

"बडा भारी मर्ज़ है। मै एक दवा देता हू। अगर तुम वाकई बीमार हो तो अच्छे हो जाओगे और मक्कर कर रहे हो तो गायब हो जाओगे। अस्तख फाअकन मफ्लातून। समझा ? ये इल्म की बाते है।"

शिवाजी ने झपटकर हकीम की डाढी नोच ली। डाढी शिवाजी के हाथ मे रह गई और सामने हकीमजी के स्थान पर तानाजी का चेहरा निकल आया। शिवाजी हक्के-बक्के होकर तानाजी का मुह ताकने लगे।

तानाजी ने कहा —"मालीखौलिया भी है। किताब मे लिखा है उल-उल्ला-बदजुल्ला।" यह कहकर डाढी छीनकर दीवार की ओर मुह फेरकर डाढी मुह पर जमा ली।

शिवाजी चुपचाप पलग पर पड रहे।

हकीम साहब ने फिर पास बैठकर नाडी पकड ली। उन्होने कहा— "क्यो महाराज, हकीम से ऐसी बेअदबी ?" इसके बाद वे खिल-खिलाकर हस पडे।

शिवाजी ने भी हसकर कहा—"कभी-कभी हकीमो का भी इलाज करना पडता है।"

कुछ देर तक दोनो धीरे-धीरे बातचीत करते रहे। फिर बाहर आकर और चार मुहर फौलादखा के हाथ पर रखकर कहा—"मरीज जल्द अच्छा होगा। जरा हमारी तारीफ करना। कल हम फिर आएगे।"

यह कहकर हकीम साहब तेजी से चले गए।

४६

पलायन

प्रसिद्ध हो गया कि शिवाजी अच्छे हो रहे है, पर मुलाकातियो के आने की मनाही है। शिवाजी के अच्छे होने की खुशी मे बडे-बडे झावे भर-कर मिठाइया मन्दिरो, ब्राह्मणो और गरीबो को बाटी जाने लगी। देवालयो मे पूजन हुए। मित्रो ने मुबारकबादिया भेजी। शिवाजी ने बडे-बडे अमीरो, मुल्लाओ और मस्जिदो मे भी मिठाइया भेजी। सूफी, मुल्ला, पीर, शाह सभीके यहा मिठाई पहुचने लगी। रोज बडे-बडे खोचे भरकर आते और बाहर जाते थे। प्रत्येक खोचा तीन हाथ लम्बा होता था। उसे दस-बारह आदमी मिलकर उठाते थे। कई दिन यह सिलसिला चलता रहा।

हकीम साहेब भी बराबर सिद्दी फौलादखा की मुट्ठिया गर्म करते थे। वह बहुत खुश था। एक झाबा-भर मिठाई उसके घर भी पहुच चुकी थी। अब वह ज्यादा देखभाल नही करता था। अन्त मे एक दिन तानाजी ने आकर कहा—"बस महाराज, आज सूर्यास्त के बाद।"

"क्या हमारे सब सैनिक महाराष्ट्र पहुच चुके ?"

"जी हा, वहा सब कुछ तैयार है।"

"यहा का इन्तजाम ?"

"सब ठीक है। मथुरा-वृन्दावन से काशी तक हमारे आदमी छद्म वेश मे जगह-जगह तैनात आपकी प्रतीक्षा कर रहे है।"

हकीम साहेब चले गए और सूर्यास्त होते ही आठ झाबे बाहर निकले—एक-एक मे शिवाजी व शम्भाजी छिपे थे। वे सकुशल नगर से बाहर निकल गए। तानाजी उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वहा एक निर्जन स्थान मे टोकरो को रखकर ढोने वालो को वहा से विदा कर दिया गया। शिवाजी और उनके पुत्र टोकरो से निकलकर द्रुत गति से

चुपचाप एक ओर को चल दिए। आगरा से छ: मील दूर एक गाव मे उनके विश्वासी वीराजी रावजी न्यायाधीश घोडो सहित उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जल्दी-जल्दी कुछ सलाह सबने की और दल तुरन्त दो टुकडियो मे बट गया। शिवाजी, शम्भाजी, उनके तीन अधिकारी वीराजी रावजी, दत्ता त्र्यम्बकराव, रघुमित्र ने मथुरा की ओर प्रस्थान किया, बाकी मराठे महाराष्ट्र की ओर चल खडे हुए।

आगरा मे रात-भर किसीको सन्देह नही हुआ, पहरेदारो ने झरोखे से झाककर हर बार देखा। शिवाजी पलग पर सो रहे हैं। उनका एक हाथ नीचे लटक रहा है, जिसमे सोने का कगन पडा है। वास्तव मे हीराजी फर्जन्द उनके स्थान मे सो रहे थे। एक सेवक बैठा उनके पाव दबा रहा था।

एक पहर दिन चढने पर पहरेदारो ने फिर देखा कि आज अभी तक शिवाजी सो रहे हैं। कुछ देर बाद हीराजी फर्जंद और वह सेवक बाहर आए। उन्होने कहा—"शोर मत करो। हमारे महाराज के सिर मे दर्द है, हम हकीम साहेब के यहा जाते है।"

जब दो प्रहर दिन चढने पर भी कुछ हलचल नही नजर आई और शिवाजी से भेट करने कोई भी नही आया तब पहरेदारो ने भीतर घुसकर देखा कि चिडिया उड गई है। इस वक्त फौलादखा शिवाजी की भग-मिश्रित मिठाई खाकर गहरी नीद मे खर्राटे ले रहा था। वह जगाया गया। कैदी के फरार होने की खबर सुनकर हक्का-बक्का हो गया। पहले तो खौफ के मारे उसकी अक्ल चकराने लगी। बाद मे वह बादशाह को खबर देने दौडा। पर बादशाह तक समाचार पहुचते-पहुचते तीसरा पहर हो गया। अब तक शिवाजी को पूरे २८ घण्टे का समय मिल चुका था और वे बिना एक क्षण रुके काशी की ओर उडे चले जा रहे थे।

बादशाह सुनकर आग-बबूला हो गया। इस घटना के कुछ दिन पूर्व ही महाराज जयसिह की मृत्यु की खबर आगरा आई थी। कुँवर

रामसिंह अभी सूतक ही मना रहे थे और हकीकत तो यह थी कि वे एक सप्ताह से शिवाजी से मिले ही न थे। पर बादशाह का सारा गुस्सा रामसिंह पर उतरा। उसने रामसिंह का किले मे आना ही बन्द कर दिया और मासिक वेतन भी घटा दिया। सिद्दी फौलादखा को भी शहर के कोतवाल के पद से च्युत कर दिया गया।

४७

मथुरा से काशी

बादशाह ने बहुत दूत चारो ओर दौडाए, पर शिवाजी की वह धूल भी न पा सका।

शिवाजी, शम्भाजी, वीराजी रावजी, दत्ता त्र्यम्बक एव रघुनाथ मराठा—ये पाचो व्यक्ति द्रुत गति से घोडो पर सवार हो निर्विघ्न मथुरा पहुच गए। वहाँ उनके सहायक साथी प्रथम ही से मुस्तैद थे। तानाजी ने अपने साथियो के साथ अभी छद्म वेश मे आगरा ही मे रहने का निश्चय किया।

मथुरा मे मोराजी पन्त की ससुराल थी। वहा उनके साले कृष्णजी रहते थे। शिवाजी को मथुरा पहुचने मे छ घटे लगे। वे सब कृष्णजी के घर सकुशल पहुच गए। इस समय ४०-५० आदमी यहाँ और एकत्र थे। वहा शिवाजी ने डाढी मुडाई, वस्त्र उतार डाले और शरीर पर राख मलकर निहग साधुओ का वेश बनाया। कुछ जवाहरात पोली छडियो मे छिपाए, तथा अशर्फियाँ गुदडी मे सी ली और प्रयाग की ओर प्रस्थान किया। इस समय शिवाजी ने बडी चतुराई से अपने साथ केवल दो विश्वस्त सहचर वीराजी रावजी पन्त और रघुनाथ मराठा को साथ लिया। शम्भाजी को कृष्णजी विश्वनाथ के घर छोडा। शेष सहचर वस्त्रो मे अपने शस्त्र छिपाए कुछ घोडो पर,

कुछ पैदल, कोई साधु, कोई वैरागी, कोई व्यापारी बनकर उनकी मण्डली से आगे-पीछे उनकी सुरक्षा की दृष्टि से छिप-छिपकर चले। शेष मराठो को सीधा महाराष्ट्र शीघ्र से शीघ्र पहुँचने का शिवाजी ने आदेश दिया।

तानाजी ने अपने सशस्त्र सैनिक आगरा और मथुरा के मार्ग पर जगलो मे छिपा दिए। उन्हे आदेश था कि मुगल सैनिक-हरकारा जो कोई भी इस मार्ग पर आता-जाता देखा जाए, काट डाला जाए। स्वय तानाजी आगरे मे अपने गुप्तचरो के साथ रहकर बादशाह की गतिविधि देखने लगे।

आकाश मे बादल छाए हुए थे। गहरी अधेरी रात थी। कुछ देर पूर्व वर्षा होकर चुकी थी। अब ठण्डी हवा बह रही थी। तीनो छद्मवेशी साधु चुपचाप तेजी से प्रयाग की राह चल रहे थे। अभी मथुरा से कुछ ही फासले पर पहुचे थे कि सहसा उन्हे घोडो की टाप सुनाई दी। शिवाजी चौकन्ने हो गए। उन्होने सहसा हाथो का चिमटा जोरो से पकड लिया। उन्होने छिपने की चेष्टा की, परन्तु यह सम्भव नही रहा। सवारो ने उन्हे देख लिया था। निरुपाय शिवाजी और उनके साथियो ने चिमटा बजा-बजाकर 'हरेराम हरेराम हरे हरे' गाना आरम्भ किया।

सवार दो थे। वे सशस्त्र थे। उन्होने कडककर कहा—"कौन हो तुम ?"

"गोसाईं है। मथुरा से आ रहे हैं बाबा, चित्रकूट जाने का सकल्प है।"

सवार ने डपटकर कहा—"हम आगरा जा रहे है पर रास्ता भूल गए है। आगे-आगे चलकर रास्ता बताओ।"

शिवाजी ने कनखियो से अपने साथी रघुनाथ की ओर देखा। उसने कसकर एक चिमटा एक सवार के सिर पर मारा। सवार चीखकर जमीन पर आ गिरा। दूसरे सवार ने तलवार सूतकर शिवाजी

पर वार किया। पर शिवाजी उछलकर दूर जा खडे हुए। सवार तलवार हवा मे घुमाता हुआ घोडा दौडाकर शिवाजी पर आ पडा। घोडे की झपट से शिवाजी गिर गए। मुगल सवार ने उनका सिर काट लेने को तलवार हवा मे ऊची की, तभी एक तीर उसके कलेजे को पार कर गया। सवार घूमकर धरती पर आ गिरा। इसी समय एक मराठा वीर ने कही से आकर तलवार से दोनो का सिर काट लिया।

शिवाजी ने कहा—"तुम्हारा नाम क्या है, वीर ?"

"मैं वेकटराव हू, पृथ्वीनाथ।"

"तुम्हारा नाम याद रखूगा।"

"महाराज, अभी आप इन म्लेच्छो के घोडे लेकर रातो-रात कूच करे। तीसरा मेरा घोडा ले ले। यहा पाच मील तक मेरा पहरा है। जगल निरापद है। पर आप जितनी जल्दी दूर निकल जाए, उतना ही उत्तम है।"

शिवाजी ने स्वीकार किया। तीनो साधु घोडो पर चढकर वायु-वेग से उड चले।

अब वे रातोरात चलते। दिन मे जगलो, पर्वत-कन्दराओ या नदी के कछार मे छिपे पडे रहते। प्रयाग तक का मार्ग उन्होने सकुशल समाप्त कर लिया। प्रयाग के निकट आकर उन्होने घोडो को जगल मे छोड दिया। और तीनो अनोखे साधु चिमटा बजाते, रामधुन गाते प्रयाग मे प्रविष्ट हुए। परन्तु प्रयाग मे उन्हे बडे कठिन प्रतिबन्धो का सामना करना पडा। बादशाही हुक्म यहा आ चुका था और आते-जाते लोगो पर कडी नज़र रखी जाती थी। प्रयाग का किलेदार सूबेदार बहादुरखा बडा ही सख्त आदमी था। उसने सैकडो सैनिको को राह-घाट पर शिवाजी की तलाश मे लगा दिया था।

परन्तु शिवाजी ने बडी प्रत्युत्पन्नमति और चतुराई से काम लिया। दो दिन प्रयाग मे ठहरकर उन्होने किलेदार की गतिविधि को देखा और अवसर पाकर साधुओ के एक अखाडे के साथ वहा से चल

दिए। बनारस मे वहा के फौजदार अलीकुली ने उन्हे सन्देह मे गिरफ्तार कर लिया। शिवाजी ने आधीरात को उससे भेट करके कहा—"शिवाजी ही हूँ, लेकित तुम मुझे चले जाने दो तो यह एक लाख का हीरा नजर करता हू। दकन पहुचकर एक लाख रुपया और दूगा।"

उस लालची ने हीरा लेकर उन्हे छोड दिया। वहा से छुटकारा पाते हो वे गया, बिहार, पटना और चादा होते हुए नदी, नाले, पर्वतो और जगलो की खाक छानते अन्तत दक्षिण जा पहुचे।

४८

माता और पुत्र

राजगढ के महलो मे जीजाबाई अत्यन्त व्याकुलता से दिन बिता रही थी। शिवाजी को दक्षिण से गए अब नौ मास व्यतीत हो रहे थे। वे सवा तीन मास आगरे मे कैद रहे। वहा से पलायन करने और काशी तक पहुचने के समाचार भी मिले थे, परन्तु उसके बाद कोई समाचार न मिला था।

प्रात काल का समय था और जीजाबाई भवानी के मन्दिर मे पूजा कर रही थी। मोरेश्वर उनके निकट हाजिर थे। जीजाबाई हाथ जोडे देवी से अरदास कर रही थी कि हे देवी, मेरा पुत्र कहा है, उसे मेरी गोद मे लाओ। मोरेश्वर कह रहे थे कि मुझे आगरा से विश्वस्त समाचार मिले है कि शत्रुओ मे प्रसन्नता के चिह्न नही है। यह मगल-सूचक है। आप चिन्ता न करे। अभी ये बाते हो ही रही थी कि दो वैरागियो ने आकर मदिर के द्वार पर मत्था टेका। जीजाबाई उन्हे प्रणाम करने उठी तो एक ने तो 'कल्याणमस्तु, आशा पूर्ण होय' कह-कर आशीर्वाद दिया, पर दूसरा दौडकर जीजाबाई के चरणो मे लिपट गया। जीजाबाई एकदम पीछे हट गई। उन्होने कहा—"यह क्या

किया, वैरागी होकर गृहस्थ के चरण पकड लिए ।" इसी समय वैरागी के सिर पर उनकी दृष्टि पडी ।

"अरे मेरा शिव्वा ?" कहकर उन्होने उसे छाती से लगा लिया । राजगढ मे हलचल मच गई । 'महाराज आ गए, महाराज आ गए,' की धूम मच गई । क्षण-भर ही मे तोपे गरज उठी और मराठा सरदार आ-आकर महाराज को मुजरा करने लगे ।

अभी तक शिवाजी वैरागी के वेश मे खडे थे । जीजाबाई ने कहा—"अरे शिव्वा, तू अभी तक मेरे आगे वैरागी के वेश मे खडा है । मोरेश्वर, जल्दी करो, अपने महाराज को पवित्र तीर्थोदक से स्नान कराकर राजसी ठाठ से सज्जित करो । राज्य-भर मे अन्न, वस्त्र, स्वर्ण आदि गरीबो और ब्राह्मणो को बाटा जाए ।" परन्तु शिवाजी अटल चट्टान की भाति चुपचाप खडे थे । उनके नेत्रो मे गत पूरे नौ मास का कठिन सघर्षमय जीवन छा रहा था । भूत-भविष्य के बडे-बडे रेखाचित्र उनके मस्तिक मे उभर रहे थे, कभी उनकी आखो मे अपनी विपत्ति और असहायावस्था के भाव आने पर जल थिरक आता था और कभी बदले की भावना से आखो मे आग निकलने लगती थी ।

इसी समय अणाजी दत्ता ने आकर हसते हुए शिवाजी के चरण पकडकर कहा—"मत्था टेकू वैरागी बाबा ।"

"धुत् ब्राह्मण होकर ऐसा काम ?"

"जय, जय, महाराज, जय, जय छत्रपति ।"

दशो दिशाएँ जयजयकार से गूज उठी ।

सबने नज़र उठाकर देखा । तानाजी मलूसरे हसते हुए जय-जयकार करते हुए चले आ रहे हैं ।

शिवाजी ने आगे बढकर उन्हे छाती से लगाया और पूछा—"कहो, आगरा मे कपटी आलमगीर पर मेरे पीछे क्या बीती ?"

तानाजी ने हसते-हसते कहा—"कुछ न पूछिए, महाराज । सारे आगरा मे शोर मच गया कि शिवाजी राजे हवाई शरीर रखते है, आस-

मान मे उड सकते है। ५० मील की छलाग मार सकते है। बादशाह की नीद हराम हो गई। उसे भय हुआ कही शाइस्ताखा की तरह या अफजलखा की तरह आप ऊपर हवा मे से न टूट पडे। उसने अपने शयनागार का पहरा कडा कर दिया। मै तो दरबार मे यह चर्चा होते छोड आया हू कि बादशाह सोच और चिन्ता से बीमार हो गया है।"

"भगवती प्रसन्न हो, वह अच्छा हो जाए और जब मरे मेरी तलवार से मरे।" शिवाजी ने गम्भीर वाणी से कहा।

एक बार फिर जयजयकार हुआ और उन्होने मोरोपन्त से पूछा—"कहिये यहा के क्या हालचाल है?"

"महाराज, जब तक आप बन्धन मे रहे, हम बेबस बैठे रहे। पर आपकी मुक्ति का समाचार सुनकर हमने अपनी-अपनी हलचलें आरम्भ कर दी है। गोलकुण्डा और बीजापुर मिल गए है। उन्होने ६,००० घुडसवार तथा २५,००० पैदल सेना सहायता को भेजी। हम लोग भी भीतर ही भीतर उनके भले मे रहे। दक्षिणी किलेदारो ने अपने मातहत घुडसवारो द्वारा मुगल सेना की दुर्गति कर डाली है। लकडी, अनाज, घास, और पानी-चारा—उन्हे कोई भी वस्तु नही मिलती। इधर अकाल भी पड गया, उपज हुई ही नही। अब शत्रु को पानी का भी कष्ट है।"

"यही कारण हुआ जयसिंह की विफलता का।"

"हा महाराज, उसके पास न धन रहा न सेना, न रसद और न पानी। उसने लोहगढ, सिंहगढ, पुरन्दर, माहुली और पन्हाला दुर्ग मे तो सेना, रसद और युद्ध-सामग्री रखी, बाकी सब किलो के दरवाज़े और परकोटे तोडकर छोड दिया। उनपर मैने अधिकार कर लिया। सबकी मरम्मत भी हो चुकी। उनमे सब युद्ध-सज्जाए तैयार है। अपने दुर्गों मे अब केवल सिंहगढ और पन्हाला दुर्ग ही रहे गया है।"

"धन्य मोरेश्वर, दो ही मास मे वे भी अपने हो जाएगे। चिन्ता न करो। मैंने उस समय जो जयसिंह से युद्ध नही किया, अच्छा ही किया। उस समय जयसिंह के पास ८०,००० सेना थी। युद्ध होता तो

बडी क्षति होती तथा परिणाम अनिश्चित था। ठीक हुआ काटे से काटा निकला। शत्रुदल बिखर गया। अपना दल अक्षत रहा। राज भी कम न हुआ, अब देखो भवानी मुझ दास से क्या कराती है।"

"महाराज, तीनो शाहिया खत्म हुई रखी है। अब पधारिए, राजवेश धारण कीजिए।"

४६
दक्षिण लौटने पर

आगरा से दक्षिण लौटने पर शिवाजी ने देखा कि दक्षिणी भारत की सारी राजनैतिक परिस्थिति ही बदल गई है और मराठो के विरुद्ध जयसिह ने पहले जो सफलताए प्राप्त की थी, वे अब सम्भव नही हैं। सितम्बर सन् १६६६ मे आगरा की कैद से छूटकर शिवाजी दक्षिण पहुचे और उसके ४ महीने बाद ही जयसिह को वापस दिल्ली बुला लिया गया। महाराज जयसिह दक्षिण की सूबेदारी का शासन-भार शाहज़ादा मुअज्ज़म को सौपकर खिन्न-हृदय दिल्ली लौटा। परन्तु वृद्ध महाराज जयसिह जिनका सारा जीवन कठिन सघर्ष मे व्यतीत हुआ था अब घरेलू चिन्ताओ से व्यथित, निराश और जर्जरित हो चुके थे, तथा बीजापुर की पिछली लडाई मे विफल होने के कारण बादशाह ने जिनका तिरस्कार किया था, वे वृद्ध व्याघ्र मिर्जा राजा जयसिह जीवित अपनी जन्मभूमि तक नही पहुचे, मार्ग ही मे २८ अगस्त को बुरहानपुर मे उनका शरीरात हो गया।

आलसी, विलासी और शक्तिहीन मुअज्जम से शिवाजी को किसी प्रकार का भय न था। उसके साथ जोधपुर के महाराज जसवन्तसिह भी शिवाजी के भीतर ही भीतर मित्र थे। उधर रुहेला सेनापति दिलेरखा वृद्धावस्था मे बहुत घमण्डी हो गया था। शाहजादा मुअज्जम के आदेशो

की वह तनिक भी परवाह न करता था और महाराज जसवन्तसिंह का खुलेआम अपमान करता था। इस प्रकार मुगलो का यह दक्षिणी पडाव आपसी ईर्ष्या-द्वेष और गृहयुद्ध का अखाडा बना हुआ था। यही कारण था कि आगरा से लौटने के बाद तीन साल तक शिवाजी के विरुद्ध कोई कार्यवाही नही हुई। शिवाजी भी अपनी दूरदर्शिता के कारण झगडे-टटे के सब अवसरो को टालते रहे। और अपनी पूरी शक्ति भविष्य की तैयारियो मे लगा दी। उन्होने अपने राज्य के शासन-प्रबन्ध को सुव्यवस्थित किया, किलो की मरम्मत की, आवश्यक युद्ध-सामग्री एकत्र की और पश्चिमी तट पर बीजापुर राज्य और जजीरा के सिद्धियो को पराजित किया और अपनी सीमाए सुदृढ की। बीच-बीच मे वे महाराज जसवन्तसिंह की लल्लो-पत्तो करते रहे और निरन्तर यही कहते रहे कि मेरे बुजुर्ग मिर्जा राजा मर चुके हैं, अब आप ही मेरे एकमात्र हितैषी हैं। मुगल दरबार से मुझे क्षमा करा दीजिए तो मैं सब प्रकार की शाही सेवा करने को तैयार हू। शिवाजी की इस विनय से सन्तुष्ट होकर अमुज्जम और जसवन्तसिंह ने शिवाजी के लिए औरगजेब से सिफारिश की। अन्त मे सन् १६६८ के आरम्भ मे एक सधि हुई जो दो वर्षों तक कायम रही। इस सधि के अनुसार औरगजेब ने शिवाजी को राजा कहना स्वीकार कर लिया और मराठो द्वारा समर्पित किलो मे से चाकण का किला उन्हे लौटा दिया। इसी सधि के अनुसार शिवाजी ने वीराजी रावजी की अधीनता मे एक मराठा सेना औरगाबाद भेज दी। शम्भुजी को पचहजारी मनसब दे दिया गया और मनसब की जागीरे बरार मे दे दी गई। परन्तु, हकीकत यह थी कि मुगल और शिवाजी के बीच की यह सन्धि एक अल्पकालीन युद्ध-विराम मात्र थी क्योकि औरगजेब को इस समय सदैव अपने बेटो से विद्रोह का खतरा बना रहता था और न जाने क्यो उसके शक्की मिजाज मे यह विश्वास घर करता जाता था कि कही मुअज्जम शिवाजी से मिलकर विद्रोह का झडा खडा न कर दे। अन्त मे उसने शिवाजी को पकडने या उसके लडके

को कैद करके धरोहर के रूप मे अपने अधिकार मे रखने का एक गुप्त षडयन्त्र करना आरम्भ किया। इसी समय एक ऐसी घटना घटी जो चिनगारी का काम कर गई। शाही दरबार मे जाने के लिए शिवाजी को जो एक लाख रुपये दिये गये थे, उनकी वसूली के सिलसिले मे बरार मे दी गई शिवाजी की नई जागीर का एक अश कुर्क कर लिया गया। बस, शिवाजी ने एकबारगी ही मुगल साम्राज्य पर धावे बोल दिए, उनके दल के दल दूर-दूर तक धावा करके मुगल प्रदेश को लूटने लगे। पुरन्दर की सन्धि के समय औरगज़ेब को जो किले सौपे गए थे, वे एक-एक करके वापस ले लिए। साथ ही सन् १६६० के अन्त तक शिवाजी ने अहमदनगर, जुन्नर और परेण्डा के आसपास के ५१ गावो को भी लूट लिया।

इस समय शाहजादा मुअज्जम और दिलेरखा का पारस्परिक विरोध बहुत बढ गया था। स्थिति यहा तक बिगड गई कि दिलेरखा को विश्वास हो गया कि यदि वह मुअज्जम की सेवा मे उपस्थित हुआ तो या तो वह कैद कर लिया जाएगा या मार दिया जाएगा। उसकी अवज्ञाओ से क्रुद्ध होकर और जसवन्तसिह के बढावे मे आकर मुअज्ज़म ने औरगज़ेब से शिकायत की कि दिलेरखा विद्रोही हो गया है। उधर दिलेरखा ने औरगज़ेब को सूचना दी कि शाहज़ादा मुअज्जम और जसवन्तसिह शिवाजी से मिलकर शाही तख्त के लिए खटपट कर रहे हैं। इस समय मुअज्जम अपनी मनमानी कर रहा था और शाही आज्ञाओ का भी पालन नही करता था, जिससे औरगजेब अत्यन्त चिन्तित और शकित हो गया था। मुगल दरबार आगरा मे यह आम बात थी कि मुअज्ज़म शिवाजी से मिलकर बादशाह को तख्त से उतारने की साठ-गाठ मे है। इसीसे शेर होकर शिवाजी के मुगल प्रदेशो पर आक्रमण सफल होते जा रहे हैं और शाहज़ादा मुअज्ज़म चुपचाप बैठा देख रहा है।

इधर दिलेरखा ने जब अपनी स्थिति को असहनीय देखा और

अपने मार डाले जाने या कैद किए जाने का उसे अदेशा हो गया तो उसने दक्षिण से भाग चलने मे ही अपनी कुशल समझी। उसने गुजरात के सूबेदार बहादुरखा से एक खत बादशाह को लिखवाया जिसमे यह सिफारिश की गई थी कि दिलेरखा को उसकी अधीनता मे काठियावाड का फौजदार नियुक्त किया जाए। बादशाह ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया और दिलेरखा ने दक्षिण से कूच कर दिया।

सितम्बर सन् १६७० के अन्त मे दिलेरखा ने दक्षिण छोडा और इसके तत्काल बाद २०,००० घुडसवार और इतने ही पैदलो को लेकर शिवाजी ने सूरत को जा घेरा। अब यह वह लुटेरा शिवाजी न था जो पहले चोर की तरह आया था और लूटमार करके भाग गया था। अब उसकी कमान मे ३०,००० मराठो की अजेय सेना थी और वह शाहजादे की छाती पर पैर रखकर सूरत पहुचा था। ३ अक्तूबर को शिवाजी ने नगर पर धावा बोल दिया। शिवाजी के सूरत पर पहले धावे से सचेत होकर औरगज़ेब ने शहर के चारो ओर शहरपनाह बना दी थी। परन्तु इससे कुछ लाभ न हुआ। नगररक्षक थोडी देर तक ही रक्षा कर सके। अत मे वे किले की ओर भाग चले। शिवाजी ने आनन-फानन शहर को अपने अधिकार मे कर लिया। केवल अग्रेज़, डच व फ्रांसीसी व्यापारियों की कोठिया, तुर्की व ईरानी व्यापारियो की बडी नई सराय और अग्रेज़ो तथा फ्रासीसियो की कोठी के बीच मे स्थित तातार सराय जिसमे मक्का की तीर्थयात्रा से हाल ही मे लौटा हुआ काशगर का सिहासन-च्युत बादशाह ठहरा हुआ था, शिवाजी के आक्रमण से बच रहे। फ्रासीसियो ने बहुमूल्य उपहार देकर मराठो को प्रसन्न कर लिया। अग्रेजो व तातारो ने दिन-भर बहादुरी से मराठो का सामना किया। अन्त मे तातार लोग अपने बादशाह को लेकर किले मे भाग गए और उनकी सारी बहुमूल्य सामग्री मराठो ने लूट ली। अन्त मे तीन दिन तक लूटमार तथा आग लगाने के काण्ड करके तथा आधे शहर को जलाकर राख करके और ६६ लाख रुपया नकद लूटकर शिवाजी सूरत से लौटे। भारत के सबसे धनवान

बन्दरगाह का सारा धन चौपट हो गया और शिवाजी और मराठो का आतक ऐसा फैला कि जब-जब मराठो के आने की झूठी-सच्ची अफवाहे नगर मे फैलती, सूरत नगर भय से आतकित हो उठता।

व्यापारी लोग हडबडाकर जल्दी-जल्दी अपना सामान जहाजो पर रखाते, नागरिक गावो को भाग जाते और यूरोपियन व्यापारी सुआली पहुचकर आश्रय लेते थे। इस प्रकार मराठो के आक्रमण और लूट के आतक का ऐसा प्रभाव हुआ कि उनके भय से सूरत का सारा विदेशी व्यापार पूर्णतया लुप्त हो गया।

५०

मुस्लिम धर्मानुशासन

इस्लामी धार्मिक असूलो के अनुसार प्रत्येक मुसलमानी राज्य की नीति धर्मप्रधान होनी चाहिए। सच्चा बादशाह और अधिकारी एकमात्र खुदाताला है। और बादशाह खुदा का प्रतिनिधि। इस हिसाब से बादशाह का यह कर्तव्य है कि वह ईश्वरीय नियमो का सब प्रजा से पालन कराए। इस नीति का दूसरा व्यावहारिक स्वरूप यह बन जाता है कि सच्चे इस्लामधर्म को राज्य मे फैलाए और राजकीय शासन द्वारा प्रजा से उसका पालन कराए। इस प्रकार के राज्य मे इस्लाम मे अविश्वास करना नियमानुसार राज-द्रोह समझा जाता है और यह मान लिया जाता है कि विधर्मी व्यक्ति ने ईश्वर के ससारी पार्थिव प्रतिनिधि बादशाह की सत्ता का अपमान करके ईश्वर के प्रतिद्वन्द्वी झूठे देवी-देवताओ की पूजा की। इसलिए वह दण्ड का अधिकारी है। ऐसी हालत मे कट्टर इस्लाम के अतिरिक्त किसी अन्य जाति या धर्म के प्रति किसी प्रकार की दया या उदारता प्रकट करना अनुचित माना जाता है। इस्लामी धर्म के अनुसार ईश्वर के साथ अन्य देवताओ पर विश्वास रखना भी कुफ्र है। इसलिए

इस्लामी धर्म के अनुसार सच्चे इस्लाम धर्म के अनुयायी का जिहाद करना एक प्रथम और महत्त्वपूर्ण कर्तव्य बन जाता है। जिहाद के सम्बन्ध मे सच्चे मुसलमानो के लिए ये आदेश है कि जब पवित्र माह समाप्त हो जाए तब उन सब आदमियो को जो ईश्वर के साथ दूसरे देवताओ के नाम जोडते और पूजते है, जहा मिले, मार डालो। पर यदि वे धर्म परिर्वातित कर ले तो उन्हे अपनी राह जाने दो और उनसे कहो कि वे तोबा करे और यदि वे फिर विधर्मी हो जाए तो उनसे लडो। इस्लामी आदेश यह भी है कि काफिरो के देश मे उस समय तक युद्ध करो जब तक कि वे इस्लामी राज्य के दायरे मे पूर्ण रूप से न आ जाए।

इन धार्मिक एव राजनैतिक सिद्धान्तो के अनुसार ऐमी विजय के बाद उस देश के काफिरो की सारी आबादी मुसलमानो की गुलाम बन जाती है। सम्पूर्ण मनुष्यो को इस्लाम के झण्डे के नीचे ले आना और उन्हे मुस्लिम बनाकर उनके हर प्रकार के धार्मिक मतभेदो को मिटा देना ही इस्लामी राज्य का आदर्श है। यदि इस्लामी राज्य के अन्तर्गत कोई काफिर रहने दिया जाय तो वह केवल अपवाद ही माना जाना चाहिए परन्तु ऐसी परिस्थिति देर तक नही रह सकती, कुछ काल तक ही अस्थायी रूप से रह सकती है। ऐसे विधर्मी को इस्लामी धर्म के नियमानुसार सब राजनैतिक और सामाजिक अधिकारो से वचित कर दिया जाना चाहिए जिससे वह शीघ्र ही उस अनोखी इस्लामी आध्यात्मिक ज्योति को प्राप्त कर ले और उसका नाम एक सच्चे मुसलमान की सूची में लिख दिया जाए।

इस धार्मिक दृष्टिकोण से कोई भी अन्य धर्मावलम्बी मुसलमानी राज्य का नागरिक कदापि नही बन सकता। वह उस राज्य के दलित समाज का एक ऐसा सदस्य बन जाता है जिसकी स्थिति लगभग गुलामो जैसी होती है। और यह मान लिया जाता है कि ईश्वर ने जो उसे जीवन और धन दिया है, जिसका कि वह उपभोग कर रहा है, और इसके लिए इस्लामी शासक उसे जो प्राणदान देते है उसके बदले मे उसे अनेक

राजनैतिक और सामाजिक अधिकारो का त्याग करना अनिवार्य हो जाता है और जो शासक उसे विधर्मी होने पर भी जीवित रहने देता है उसके इस उपकार के बदले उसे एक कर देना उसका कर्तव्य हो जाता है जिसे 'जजिया' कहते है। इसके अतिरिक्त यदि वह जमीन का मालिक है तो उसपर उसे खिराज देना चाहिए और सेना के खर्च के लिए भी अलग कर देना चाहिए। यदि वह स्वय सेना मे भरती होना चाहे तो वह ऐसा नही कर सकता। विधर्मी को 'जिम्मी' कहते हैं। कोई भी जिम्मी किसी प्रकार का बढिया और महीन कपडा नही पहन सकता, न वह घोडे पर चढ सकता है, न वह शस्त्र धारण कर सकता है। प्रत्येक मुसलमान के साथ उसे सम्मानपूर्वक पूरी दीनता दिखाते हुए दरिद्र वेश मे रहना चाहिए, और अपने आचरणो से यह प्रमाणित करना चाहिए कि वह विधर्मी और विजित जाति का आदमी है।

कोई भी जिम्मी किसी भी हालत मे मुसलमानी राज्य का नागरिक नही है। वह अपनी धार्मिक क्रियाओ, पूजा-पाठ आदि के सम्बन्ध मे सार्वजनिक रूप मे न तो बात ही कर सकता है और न प्रदर्शन। अदालतो मे गवाही देने, फौजदारी कानून, विवाह आदि के मामलो मे उसपर अनेक अयोग्यताए लादी गई है। उसे अदालत मे गवाही देने का अधिकार नही है।

एक तरफ तो विधर्मियो के लिए ऐसे कठोर और अपमानजनक नियम थे, दूसरी ओर धर्म छोडकर इस्लाम स्वीकार कर लेने वालो को धन अथवा नौकरी दिए जाने के प्रलोभन भी थे।

अरब के विजेताओ ने सर्वत्र सहनशीलता के नियमो का पालन किया था किन्तु बाद मे तुर्को के शासन-काल मे विधर्मियो के लिए यह कठोर नियम अपनाए गए और इस प्रकार जिहाद मे काफिरो को मारना और उनके धार्मिक स्थानो को नष्ट करना पुण्य कार्य माना गया। इससे मुसलमानो मे एक ऐसी मनोवृत्ति पैदा हो गई कि उनके स्वभाव मे लूटमार और नरहत्या एक धार्मिक कार्य और ईश्वरीय आदेश की भाति माना

जाने लगा। यहा तक कि वासनाओ को वश मे करने और इन्द्रियो को दमन करने की अपेक्षा काफिर को कत्ल करना और उसका धन लूट लेना एक मुसलमान के लिए स्वर्ग-प्राप्ति का कारण बन गया। यही कारण था कि इस्लाम के आदर्श अपने अनुयायियो के सच्चे हितो की उन्नति मे सहायक नही हुए। इस्लाम की इस नीति के कारण सम्पूर्ण इस्लामी सस्था एक ऐसा सगठन बन गई जिसका कार्य केवल युद्ध था।

मुसलमान नये-नये स्थानो को जीतने और लूटने की मनोवृत्ति को मन मे पनपाते रहे। भारत मे जब मुसलमानी राज्य विस्तार की चरम सीमा को पहुच गया और आसाम और चटगाव की पहाडियो से जा टकराया तो उसने दक्षिण की ओर रुख करके महाराष्ट्र की सूखी चट्टानो मे अपनी राह बनाने की निष्फल चेष्टा की। परन्तु राज्य का कोई स्थायी आर्थिक आधार न था। इन मुस्लिम नेताओ और विजेताओ मे योग्यता भी न थी कि वे निरन्तर चलने वाले युद्धो मे टिक भी सके और शान्ति-कालीन उद्योग-धन्धो और कला-कौशल को बढावा दे सके।

इस्लामी राज्य की इस नीति का परिणाम यह हुआ कि मुसलमानो को एक विशेषाधिकार प्राप्त जाति का स्थान मिल गया। अत इस अधिकारी वर्ग का भरण-पोषण राज्य-अधिकारी द्वारा ही होता था। इसलिए शातिकालीन समय मे वे आलसी होते चले गए। जीवन के क्षेत्र मे उनमे अपने पैरो पर खडे होने की शक्ति न रही। राज्य के ऊचे-ऊचे ओहदो पर बैठना उनका जन्मसिद्ध अधिकार था। उन्हे न योग्यता के प्रदर्शन करने की आवश्यकता थी, न शौर्य की। इस प्रकार मुस्लिम साम्राज्य एक ऐसी जाति के हाथ मे रह गया जो अयोग्य और आलसी थी और इस कारण मुस्लिम राज्यो की जड खोखली होती चली गई। धन से आलस्य और विलासप्रियता बढी जो इस समूची जाति को दुर्व्यसन और कुकर्मो की ओर ले गई और जब साम्राज्य की समृद्धि का अन्त हुआ तो एक बार ही सर्वनाश वज्र की भाति उनपर आ टूटा।

हिन्दू प्रजा, जो उनके आश्रित थी और जिसके साथ सब प्रकार के

दुर्व्यवहार किए जा रहे थे, का उपयोग राज्य की उन्नति और विकास के लिए न किया जा सका। उनपर खुलेआम कानून के द्वारा या हाकिमो की स्वेच्छाचारिता के कारण दबाव डालकर उनके विकास को रोक दिया गया था। वे पशुओ की भाति किसी प्रकार जीवन व्यतीत कर रहे थे। वे शासको की चाकरी करते और पैसा कमाकर उन्हे सौंप देते। अपनी गाढी कमाई मे से भी अपने लिए बचा रखने का उनको अधिकार न था। यही कारण था कि मुस्लिम काल मे उनका शारीरिक और मानसिक विकास न हुआ। ज्ञान और चिन्तन के क्षेत्र मे भी वे पिछड गए। जिन मुसलमान बादशाहो ने हिन्दुओ के साथ सहिष्णुता की नीति बरती, उन्हे धन और ऊचे पद दिए, उनके साहित्य और कला को उत्साहित किया, उनके राज्य समृद्धिपूर्ण और शक्तिशाली हुए।

परन्तु यह सबकुछ अपवाद के रूप मे ही हुआ और इस प्रकार की सारी कार्यवाही मुस्लिम दृष्टि से एक निन्दनीय आचरण था और यह समझा जाता था कि शासक ने अपने प्रधान शासक की अवहेलना की है। सच्चे मुस्लिम शासक की सारी सत्ता मुस्लिम सेना पर आधारित थी। मुस्लिम राज्य के आधारभूत साधनो की दृष्टि से गैर-मुसलमानो की वृद्धि और उन्नति और निरन्तर अस्तित्व बना रहना सर्वथा असगत था। ऐसे राजनैतिक समाज मे एक अनिश्चित और अस्थायी भावना उत्पन्न होती गई तथा शासक और शासितो के बीच परम्परागत विरोधी भावना निरन्तर बनी रही जिसका परिणाम यह हुआ कि विधर्मी मुस्लिम राज्य का अन्त मे विनाश हुआ और यह कार्य औरगज़ेब के शासन-काल मे हुआ।

५१

औरंगजेब की कट्टर राजनीति

औरंगजेब एक धूर्त और कुटिल राजनीतिज्ञ था। अपने राज्य के पहले ही वर्ष मे उसने नये मन्दिरो के निर्माण का निषेध कर दिया। बाद मे तो उसने अनेक मन्दिरो को भ्रष्ट किया, नष्ट किया और उनके स्थानो पर मस्जिदे बनवाई। उसने कटक से लेकर मेदिनीपुर तक उडीसा के स्थानीय हाकिम को सारे मन्दिर गिरवा देने की आज्ञा दी और हिन्दुओ की धार्मिक भावनाओ पर रोक लगवाई। उसने गुजरात का सोमनाथ का मन्दिर, काशी का विश्वनाथ का मन्दिर, मथुरा का केशव-राय का मन्दिर ढा दिए, जिन्हे सारे भारत की जनता आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखती थी। उसने मथुरा शहर का नाम बदलकर इस्लामा-बाद रख दिया और साम्राज्य के सब सूबो, परगनो, शहरो और महत्त्व-पूर्ण स्थानो मे जनता के सदाचार की देखभाल करने के लिए मौहतसिब नियुक्त किए जिनका वास्तविक काम था हिन्दुओ के तीर्थों का विध्वस करना। उसने हिन्दुओ पर जज़िया लगाया, स्त्रियो, चौदह वर्ष के बच्चो और गुलामो को ही इससे छूट मिलती थी। धनवान, लगडो, अधो, पागलो और महन्तो को भी यह कर देना पडता था। एक बार दिल्ली और उसके आसपास के रहने वालो ने इस कर का विरोध भी किया। उन्होने बडी करुणाजनक प्रार्थनाए भी की परन्तु कोई सुनवाई नही हुई। इस कर से बहुत बडी रकम शाही खज़ाने मे जाती थी। इससे बचने के लिए बहुत-से हिन्दू मुसलमान हो गए। इसके अतिरिक्त हिन्दुओ से बिक्री-कर लिया जाता था और मुसलमानो से नही। मुसलमान होने पर उन्हे ऊचे पद, जायदाद व दूसरे प्रलोभन दिए जाते थे। उसने अपने सब शासको और ताल्लुकेदारो को आज्ञा दी थी कि अपने हिन्दू पेशकारो को निकालकर मुसलमानो को भर्ती करे। उसने हिन्दुओ के मेलो को भी

रोक दिया और त्यौहारो पर भी रोक-टोक लगाई।

५२
जजिया

शिवाजी के आगरा से निकल भागने से क्रुद्ध होकर औरगजेब ने सब हिन्दुओ पर जजिया का कर लगा दिया। इस समाचार से सारे हिन्दुओ मे हलचल मच गई। हिन्दू सामूहिक रूप से अपनी फरियाद लेकर बादशाह की सेवा मे पहुचे। बादशाह हाथी पर सवार हो जुमे की नमाज़ पढने को जुम्मा मस्जिद की ओर रवाना हुआ तो लाखो हिन्दू राह पर लोट गए। उन्होने रो-धोकर अपनी फरियाद बादशाह से अर्ज़ की पर औरगज़ेब यो पसीजने वाला आदमी न था। उसने हाथी आगे बढाने का हुक्म दिया और हाथी नर-नारियो को कुचलता हुआ आगे बढ चला। सिपाहियो के घोडो ने भी बहुतो को रौद डाला। जब यह खबर चारो तरफ फैली तो हिन्दुओ मे रोष की ज्वाला धधक उठी।

शिवाजी ने औरगज़ेब को एक खत लिखा—

"मैंने सुना है कि मेरे साथ युद्ध करने के कारण खज़ाने खाली हो जाने से तग आकर हुजूर ने हिन्दुओ पर जज़िया नाम का कर लगा दिया है ताकि शाही खर्च चल सके। जनाबे आली, जलालुद्दीन अकबर बादशाह ने ५२ वर्ष तक पूरी शक्ति के साथ राज्य किया। उसने ईसाई, यहूदी, मुसलमान, दादूपन्थी, फलकिया, मलकिया, अन्सारिया, दहरिया, ब्राह्मण और जैनो के साथ समान व्यवहार जारी रखा। उसके हृदय का भाव यह था कि सब प्रजा प्रसन्न और सुरक्षित रहे। इसी कारण वह 'जगद्गुरु' नाम से विख्यात हो गया था।

"उसके पश्चात् बादशाह नूरुद्दीन जहागीर ने दुनिया और उसके निवासियो पर २२ वर्ष तक अपनी शीतल छाया फैलाए रखी। उसने

अपना हृदय मित्रो को और हाथ कार्य को सौंपा, जिससे उसे हरेक अभीष्ट वस्तु प्राप्त हुई। वादशाह शाहजहा ने ३२ वर्ष तक राज्य किया और अनन्त जीवन का फल प्राप्त किया, जो नेकी और यश का दूसरा नाम है।

"परन्तु हुजूर के राज्य-काज मे बहुत-से किले और सूबे हाथ से निकल गए है, और शेष भी निकल जाएगे, क्योकि मेरी ओर से उनके नष्ट करने मे कोई कसर न छोडी जाएगी। आपके राज्य मे किसान कुचले गए है, हरेक गाव की आमदनी कम हो गई है, एक लाख की जगह एक हजार और एक हजार की जगह दस, और वह भी बहुत कठिनाई से वसूल होता है।

"हुजूर, यदि आप इलहामी किताब और खुदा के कलाम पर विश्वास रखते हो, तो देखिए वहा खुदा को रब-उल-आलमीन (ससार-भर का खुदा) कहा है, रब-उल-मुसलमीन (मुसलमानो का खुदा) नही कहा। यह ठीक है कि इस्लाम और हिन्दूधर्म एक-दूसरे के विरोधी भाव के प्रदर्शक हैं। वे असल मे चित्र भरने के लिए केवल दो जुदा-जुदा रग है। यदि यह मस्जिद है, तो वहा उसीकी याद करने के लिए दुआ की जाती है। यदि वह मन्दिर है, तो उसमे, उसीकी तलाश मे घण्टा बजाया जाता है। किसी भी मनुष्य के धार्मिक विश्वास या धार्मिक क्रिया-कलाप के साथ दुश्मनी करना पवित्र पुस्तक के शब्दो को बदलने के समान है।

"पूरे न्याय की दृष्टि से देखा जाए, तो जजिया उचित नही है। राजनीतिक दृष्टि से केवल उसी दशा मे जजिया को माना जा सकता है, जब सुन्दर स्त्रिया आभूषणो से अलकृत होकर राज्य के एक भाग से दूसरे भाग मे जा सके। परन्तु आज जबकि शहर तक लूटे जा रहे है, तब खुली आबादी का क्या कहना है? जज़िया केवल अन्यायपूर्ण ही नही है, यह भारत मे एक नई वस्तु है, और समय के विरुद्ध है।

"यदि आप समझते हो कि हिन्दू प्रजा को दबाना और डराना धर्म है, तो आपको चाहिए कि आप पहले राणा राजसिंह से जज़िया कर

वसूल करे क्योकि वह हिन्दुओ का शिरोमणि है । उसके बाद मुझसे भी जज़िया लेना आपको कठिन न होगा, क्योकि मै आपका सेवक हू । परन्तु चीटियो और मक्खियो को सताने मे कोई बहादुरी नही है ।

"मैं आपके नौकरो की अद्भुत स्वामिभक्ति पर आश्चर्यान्वित हू कि वह आपको राज्य की ठीक-ठीक दशा नही बतलाते और आग को फूस से ढकना चाहते है । मैं चाहता हूँ कि आपके बडप्पन का सूर्य आकाश मे चिरकाल तक चमकता रहे ।"

और भी कई हिन्दू राजाओ ने औरगजेब की आखे खोलने की चेष्टा की परन्तु कुछ सफलता न मिली । जज़िया लगाने का हुक्म लेकर हरकारे चारो ओर फैल गए । गरीब प्रजा के लिए तो मानो मृत्यु का सन्देश आ गया । सूबे के शासक अधिक-से-अधिक जजिया उगाहने मे कारगुज़ारी समझने लगे । कर वसूल करने के लिए प्राय बल का प्रयोग आवश्यक हो जाता था । इससे चारो ओर हाहाकार मच गया ।

जजिया कर लगाने के प्रत्यक्ष फल दो हुए—सरकार की आय बढ गई और नये मुसलमानो की सख्या मे वृद्धि होने लगी । बहुत-से स्थानो मे ६ मास के अन्दर-ही-अन्दर सरकारी खज़ाने की आय चौगुनी हो गई । औरगज़ेब ने प्रान्त-शासको को लिख दिया था, "तुम्हे अन्य सब प्रकार के करो को माफ करने का अधिकार है, परन्तु जजिया किसीको माफ नही किया जा सकता ।" गुजरात मे केवल जज़िया से जो आय थी, वह शेष सारी आय का लगभग ३१ फीसदी थी । इस प्रकार जज़िया लगाने का तुरन्त परिणाम यह हुआ कि राज्य की आय बढ गई ।

दूसरा परिणाम यह हुआ कि नौ-मुसलिमो की सख्या बढने लगी । बहुत-से हिन्दू, जो नही दे सकते थे, मुसलमान बन गए । औरगज़ेब प्रसन्न होता था कि कठोर उगाही से हिन्दू लोग इस्लाम ग्रहण करने के लिए बाधित होते थे ।

ये दोनो जजिया के प्रत्यक्ष और तत्काल परिणाम थे । परन्तु उसके जो अप्रत्यक्ष और अन्तिम परिणाम थे, वे इनसे कही अधिक

महत्त्वपूर्ण थे। सोने के अडे देने वाली चिडिया ज़िन्दा रहकर अडा दे सकती है। यदि उसमे से एक बार ही सब अडे लेने का प्रयत्न किया जाए तो वह स्वय ही न रहेगी, फिर अण्डे कहा से आएगे। जज़िया का बोझ पडने से हिन्दू व्यापारी शहरो को छोडकर भागने लगे, क्योकि शहरो मे ही वसूली का जोर था। इससे व्यापार थोडे ही दिनो मे चौपट हो गया। छावनियो मे विशेष दिक्कत होने लगी। हिन्दू व्यापारियो के भाग जाने से फौजो को अन्न मिलना भी कठिन हो गया। जब प्रान्तो के शासको या सेनापतियो की ओर से यह सिफारिश आती कि कुछ समय के लिए जजिया वसूल न किया जाए, तो औरगज़ेब का ज़ोरदार इन्कार पहुच जाता। अन्तिम फल यह हुआ कि शहरो का व्यापार उजडने लगा, जिससे केवल जजिया कर की ही नही, वस्तुत हर प्रकार की सरकारी आमदनी घटने लगी।

५३

चौसर का दाव

वसन्त के सुन्दर दिन थे। शिवाजी इन दिनो राजगढ मे रहकर औरगज़ेब की ज़बर्दस्त सग्राम-योजना की जवाबी तैयारी कर रहे थे। परन्तु जीजाबाई इन दिनो प्रतापगढ दुर्ग मे थी। एक दिन सायकाल के समय एक बुर्ज पर खडी वे सूर्यास्त का सुन्दर दृश्य देख रही थी कि दूर से उन्हे सिहगढ का बुर्ज दीख पडा। उसे देखते ही उनके मन मे विचार आया कि मेरे शिवा के रहते मेरी आखो के सम्मुख यह शत्रु का किला खडा है। उन्होने तत्काल एक दूत शिवाजी के पास रवाना किया। शिवाजी को तत्क्षण ही चले आने की आज्ञा थी।

शिवाजी माता का आदेश पाते ही ताबडतोड आ हाज़िर हुए। आकर उन्होने माता की वन्दना की और आज्ञा का कारण जानना चाहा।

जीजाबाई ने कहा —"आओ बेटे, एक बाजी चौसर खेले।"

शिवाजी ने समझा, माता का कोई गूढ आशय है। वे चौसर खेलने लगे।

उन्होने कहा—"माता, पहला पासा आप डाले।"

"नही बेटे, राजा की विद्यमानता मे कोई पहल नही कर सकता। यह राजपदवी का अधिकार है।"

शिवाजी ने हसकर पासा फेका पर पासा अच्छा न पडा। तब जीजाबाई ने पासा फेका। वह अच्छा निकला।

शिवाजी ने कहा—"मै हार गया। कहिए क्या भेट करूँ ?"

"मुझे सिहगढ चाहिए।"

शिवाजी सन्न रह गए। उन्होने कहा—"बडा कठिन वचन मागा माता।"

"पुत्र, यह शत्रु का किला मेरी ही आखो के सामने शूल बनकर खडा है। इसे बिना जय किए तेरा राज्य अधूरा है।"

कुछ देर शिवाजी चुपचाप खडे सोचते रहे। फिर उन्होने पालकी लाने की आज्ञा दी और मा से कहा—"चलिए माताजी, राजगढ चले।"

राजगढ मे आकर भोर ही शिवाजी ने दरबार किया। सब सामन्त सरदार एकत्र हुए। दरबार मे १० पानो का बीडा चादर बिछाकर रखा गया। शिवाजी ने कहा—"कौन वीर प्राणो की बाज़ी लगाकर किला सर करेगा ?"

परन्तु सिहगढ का नाम सुनकर सब सन्नाटे मे आ गए। प्रथम तो सिंहगढ अजेय दुर्ग था। दूसरे इस समय उदयभानु उसका किलेदार था जो शारीरिक बल मे राक्षस के समान था। दुर्ग मे दुर्दान्त पठानो की सेना थी वह भी अजेय समझी जाती थी। इसके अतिरिक्त इसी दुर्ग मे वह पठान सेनापति भी था जिसने तानाजी की बहन को हरण किया था।

जब बडी देर तक सभा मे सन्नाटा रहा और किसीने बीडा नही

उठाया तो शिवाजी ने शेर की भांति दहाडकर कहा—"तानाजी मलूसरे को बुलाना होगा। वही वीर यह बीडा उठाएगा।" तत्काल एक तीव्रगामी साडनी-सवार तानाजी को बुलाने रवाना हो गया जहा वे अपने पुत्र के ब्याह के लिए छुट्टी लेकर अभी कुछ दिन पूर्व गए थे।

५४

साडनी-सवार का सन्देश

ग्राम मे बडा कोलाहल था। बालक धूम मचा रहे थे और विविध वस्त्र पहने स्त्री-पुरुष कामकाज मे व्यस्त इधर-से-उधर दौड-धूप कर रहे थे। तानाजी के पुत्र का विवाह था। द्वार पर नौबत बज रही थी। आगत जनो की काफी भीड थी।

सन्ध्या होने मे अभी विलम्ब था। एक श्रमिक, शिथिल साडनी सवार ने नगर मे प्रवेश किया। थोडे-से बालक कौतूहलवश उसके पीछे हो लिए। ग्राम के चौराहे पर जाकर उसने अपनी बगल से छोटी-सी तुरही निकालकर फूकी। देखते-देखते दस-बीस नर-नारी और बहुत-से बालक एकत्र हो गए। सवार ने एक वृद्ध को लक्ष्य करके कहा—"मुझे तानाजी के मकान पर अभी पहुचना है।"

तुरन्त दस-पाच आदमी साथ हो लिए। सम्मुख ही तानाजी का घर था। वहा पहुचकर उसने फिर तुरही बजाई। कोलाहल बन्द हो गया। सभी व्यग्र होकर आगन्तुक को देखने लगे। उसने जरा उच्च स्वर से पुकारकर कहा—"छत्रपति शिवाजी महाराज की जय हो! मैं तानाजी के पास महाराज का अत्यावश्यक सन्देश लेकर आया हू। तानाजी अभी चलकर महाराज से मुलाकात करे।"

उपस्थित जन-मण्डल ने चिल्लाकर कहा—"छत्रपति महाराज की जय!"

हल्दी से शरीर लपेटे, ब्याह का कगना हाथ मे बाधे पुत्र को छोडकर तानाजी बाहर निकल आए। धावक ने उन्हे पत्र दिया। पत्र पढकर तानाजी क्षण-भर को विचलित हुए। इसके बाद ही उन्होने अग्निमय नेत्रो से उपस्थित जन-समूह को देखा। वह उछलकर एक ऊचे स्थान पर चढ गए, और उन्होने गभीर व उच्च स्वर से कहना आरम्भ किया—"सज्जनो! महावीर छत्रपति महाराज ने मुझे इसी क्षण बुलाया है। यह शरीर और प्राण महाराज का है। फिर बहिन के प्रतिशोध का भी यही महायोग है। मैं इसी क्षण जाऊगा। आप लोग कल प्रात काल ही प्रस्थान करे। विवाह-समारोह अनिश्चित समय के लिए स्थगित किया गया।"

तानाजी बिना उत्तर की प्रतीक्षा किए चीते की भाति उछलकर कूद पडे और घर मे चले गए। कुछ ही क्षण बाद वह अपने प्यारे बर्छे और विशाल तलवार के साथ सज्जित होकर घोडे पर सवार हुए। विवाह का आनन्द-समारोह स्तब्ध हो गया। गुरुजनो को प्रणाम कर पुत्र को छाती से लगा उन्होने बढते हुए सन्ध्या के अन्धकार मे डूबते हुए सूर्य को लक्ष्य कर उन दुर्गम पर्वत-उपत्यकाओ मे घोडा छोड दिया।

५५

बीडा-ग्रहण

तानाजी के आने पर शिवाजी ने उन्हे माता की आज्ञा सुना दी। माता की आज्ञापालन कर तानाजी ने बीडा आदरपूर्वक उठा पगडी मे रख लिया। जीजाबाई ने आकर वीर की आरती उतारी। दूसरे ही दिन एक हज़ार जुझाऊ वीरो की सेना लेकर उन्होने सिहगढ की ओर प्रस्थान किया और एक सघन जगल मे डेरा डाला।

सिहगढ किले मे समाचार ले जाने-पहुचाने वाले लोग कोली और

कुम्हार लोग थे। उन्हे हर समय किले से बाहर और बाहर मे किले मे आने-जाने की छूट थी। तानाजी ने उनसे मिलकर काम निकालने की युक्ति सोची। दैवयोग से अनुकूल अवसर भी मिल गया। कोलियो के सरदार रायजी की पुत्री का ब्याह पूना निवासी दौलतराय के पुत्र के साथ था। दौलतराय तानाजी के परिचित थे। दौलतराय की सहमति से तानाजी एक कलावन्त की हैसियत से बारात मे सम्मिलित हो गए। दौलतराय ने तानाजी को प्रसिद्ध कलावन्त गोन्धाजी तोताराम बताया। जब उन्होने मधुर स्वर मे शिवाजी का स्तवन गाया तो श्रोता मुग्ध होकर शिवाजी की चर्चा करने लगे। गायन का अभिप्राय था कि शिवाजी शिव के अवतार है। अम्बाबाई की प्रार्थना पर जीजाबाई के गर्भ से मुगलो का सर्वनाश करने को उन्होने अवतार लिया है। वे गौ-ब्राह्मण के रक्षक है। अन्तिम चरण गाया—"जे जे मोगलाच चाकर थूरे थूमचा जिनगी बर।"

गाने के मधुर स्वर और हृदयग्राही भाव सुनकर रायजी मुग्ध हो गए और तानाजी को अक मे भरकर कहा—"माग, क्या मागता है।"

तब एकान्त मे ताना ने अपना परिचय देकर रायजी से कोलियो-कुम्हारो की सहायता मिलने का वचन लिया।

कृतकृत्य होकर तानाजी अपनी छावनी मे लौट आए।

तीज का चन्द्रमा उदय हुआ। उसकी क्षीण चादनी पर्वतो पर फैल गई। आकाश मे असख्य नक्षत्र उदित थे। तानाजी छावनी के एकान्त भाग मे खडे हुए अजेय सिहगढ की ओर ध्यान से देख रहे थे। उन्होने अकस्मात् देखा—एक मनुष्य-मूर्ति किले से निकलकर धीरे-धीरे पहाड से नीचे उतर रही है। तानाजी ने अपनी कमर मे लटकती तलवार को भली भाति परखा और चुपचाप उस ओर को चल दिए जिधर वह मनुष्य आ रहा था। निकट पहुच एक झाड़ी मे छिप गए और अवसर पाकर तलवार उसके कण्ठ पर रखकर कहा—"सच कह तू कौन है ?"

वह पुरुष प्रथम तो तनिक घबराया। फिर उसने कहा—"मै राजपूत हू, मेरा नाम जगतसिह है। आप कौन है जो अकारण ही शत्रुवत् व्यवहार कर रहे है ?"

"मै जानना चाहता हू कि तुम शत्रु हो या मित्र।"

"यदि आप इस किले के निवासी है तो मै आपका शत्रु हू। यदि नही है तो मित्र हू।"

"जब किले वाले तुम्हारे शत्रु है तब तुम किले मे क्यो गए थे ?"

"यह बात मैं केवल मित्र को बता सकता हूँ।"

"तो मित्र समझ कर ही बताओ।"

"किन्तु आप कौन है ? आपका नाम क्या है ?"

"अभी इतना ही जानो कि मित्र हू। धोखा नही होगा।"

"आप केवल यह बता दीजिए कि क्या आप महाराज शिवाजी के आदमी है ?"

"तुम्हारा अनुमान ठीक है।"

"तब सुनिए। दुरात्मा उदयभानु इस दुर्ग का स्वामी है। उसके पिता उदयपुर के एक सामन्त थे। उन्हीका बादी-पुत्र यह है। इसने उदयपुर के एक बडे सामन्त की पुत्री कमलकुमारी से जबर्दस्ती ब्याह करना चाहा था। पर उसके पिता ने घृणापूर्वक अस्वीकार कर दिया। इसपर वह आगरा औरगजेब के पास पहुचा और अपने को उदयपुर का राजकुमार बताकर मुसलमान हो गया जिससे औरगजेब इसपर प्रसन्न हो गया और महाराज जसवन्तसिंह के स्थान पर यहा भेज दिया। उधर कमलकुमारी का विवाह भी हो गया और वह विधवा भी हो गई। जिस समय यह सेना सहित मेवाड की सीमा पार कर रहा था, कमलकुमारी सती होने जा रही थी। इसने तत्काल धावा मारा और कमलकुमारी को मार-काट करके ले भागा। उसके साथ मेरी पत्नी भी थी। वह भी उसने पकड ली और दोनो को यहा ले आया तथा दोनो को बन्दी करके यहा रखा है। बादशाह ने उसका विवाह रोक दिया

खडे थे । तारो के क्षीण प्रकाश मे घोडो को कष्ट होता था, पर सेना की अबाध गति जारी थी ।

हठात् सैनिक रुक गए । अग्रगामी सैनिक ने पक्ति से पीछे हटकर कहा—"श्रीमान्, बस यही स्थान है ।"

"आगे रास्ता नही ?"

"नही, श्रीमान् !"

"तब यहा से क्या उपाय किया जाए ?"

"इस ढालू चट्टान पर चढना होगा ।"

"यह बहुत कठिन है ।"

"परन्तु दूसरा उपाय ही नही है ।"

"तब चढो ।" तानाजी चट्टान को दोनो हाथो से दृढता से पकड-कर खडे हो गए ।

देखते-देखते दूसरा सैनिक छलाग मारकर चट्टान पर हो रहा, और सेनानायक को खीच लिया । उस बीहड और सीधी खडी चट्टान पर धीरे-धीरे ये हठी सैनिक उस दुर्भेद्य अन्धकार मे चढने लगे । कल्याण बुर्ज के नीचे आकर तानाजी ने कहा—"अब कमन्द लाओ ।"

सन्दूकची मे से शिवाजी की प्रसिद्ध घोरपड 'यशवन्त' गोह निकाली गई । उसके माथे पर तानाजी ने चन्दन का तिलक लगाया । गले मे माला पहनाई और कमन्द मे बाधकर फेका । परन्तु गोह स्थान पर न पहुच सकी, वापस आ गई । तानाजी ने क्रोध करके कहा—"इस बार भी यशवन्त लौट आया तो इसे मारकर खा जाऊगा ।"

उन्होने पूरे जोर से उसे ऊपर फेका । गोह ने बुर्ज पर पजे गाड दिए । तानाजी दातो मे तलवार दबाए बुर्ज पर पहुच गए । वहा जगतसिह तैयार था । उसका साथी तुर्क मरा पडा था ।

रस्सियो को बुर्ज के कगूरो मे अटका दिया गया । अब एक के बाद दूसरा और फिर तीसरा, इस प्रकार बारह सैनिक बुर्ज पैर पहुच गए, इसी समय कमन्द टूट गया । नीचे के सिपाही नीचे रह गए । दुर्ग

मे सन्नाटा था । सब चुपचाप दीवारो की छाया मे छिपते हुए फाटक की ओर बढ रहे थे । फाटक पर प्रहरी असावधान थे । एक ने सजग होकर पुकारा—"कौन ?"

दूसरे ही क्षण एक तलवार का भरपूर हाथ उसपर पडा। सभी प्रहरी सजग होकर आक्रमण करने लगे । देखते-ही-देखते किले मे कोलाहल मच गया । जगह जगह योद्धा शस्त्र बाधने और चिल्लाने लगे तथा मशालो के प्रकाश मे इधर-उधर घूमने लगे ।

बारहो व्यक्ति चारो ओर से घिर गए । उनके आगे तानाजी और जगतसिह थे । वे भीम वेग से फाटक की ओर बढे जा रहे थे । प्रहरी मन मे भयभीत थे । तानाजी ने एक बार प्रचण्ड जयघोष किया और उछलकर फाटक पर चढ बैठे । साथियो ने प्रहरियो को तलवार के बल चीर डाला, तब तानाजी ने साहस करके फाटक खोल दिया । हर हर महादेव का घोष करती मराठो की सेना सूर्याजी के नेतृत्व मे किले मे घुस गई ।

इस समय महल मे उदयभानु के ब्याह की तैयारी हो रही थी । काजी साहेब आ चुके थे । कमलकुमारी सिसक-सिसककर रो रही थी । काजी साहेब उसे दम-दिलासा दे रहे थे । इसी समय हर हर महादेव का शब्द सुनकर उदयभानु चौक पडा । जब उसने सुना कि शत्रु किले मे घुस आए है तब उसने चीखकर कहा—"सिद्दी हलाल को भेजो, चन्द्रावल हथिनी को तैयार करो । खा साहेब को खबर करो ।" काज़ी से उसने कहा, "झटपट निकाह पढो ।"

परन्तु सिद्दी हलाल का जगतसिह ने सिर काटकर महल मे फेक दिया, इसी समय तानाजी ने हाथी की सूड काटकर उसके पैरो को ज़ख्मी कर दिया । हाथी चिघाडता हुआ भागा । तब उदयभानु ने अपने बारह बेटो को भेजा । परन्तु वे भी देखते-देखते काम आए । मराठे ऐसी प्रचण्डता से तलवार चला रहे थे कि बडे-बडे सूरमाओ का धैर्य भग हो रहा था । निकाह सम्पन्न नही हुआ । जगतसिंह और तानाजी महल मे घुस आए । अन्तत उदयभानु तलवार लेकर उनसे जूझने लगा । इसी

समय मराठा वीरो ने महल मे आग लगा दी। भयानक चीत्कार और रोना-पीटना मच गया। अवसर पाकर उदयभानु ने ताककर तलवार का भरपूर हाथ तानाजी के सिर पर दिया, तानाजी का भी एक भरपूर हाथ पडा। दोनो वीर एक साथ गिरकर गुथ गए। इसी समय सूर्याजी ने उदयभानु का सिर काट लिया।

हर-हर महादेव करती हुई महाराष्ट्रीय सेना मारकाट करने लगी। बडा भारी घमासान मच गया। रुण्ड-मुण्ड डोलने लगे। घोडो की चीत्कार, योद्धाओ की ललकार और तलवारो की झनकार ने भयानक दृश्य उपस्थित कर दिया। इसी समय खान पठानो की सेना को लेकर आगे बढा। जगतसिह ने सकेत किया।

तानाजी ने ललकारकर कहा—"इधर आ यवन सेनापति, मर्द की भाति युद्ध कर। आज बहुत दिन का लेन-देन चुकाऊगा।"

यवन सेनापति ने ज़ोर से कहा—"काफिर, मैं यहा हू। सामने आ, गरीब सिपाहियो को क्यो काटता है।"

तानाजी उछलकर खान के सम्मुख गए। दोनो मे घमासान युद्ध होने लगा। दोनो तलवार के धनी थे। पर तानाजी घायल थे। मशालो के धुधले प्रकाश मे दोनो योद्धाओ का असाधारण युद्ध देखने को सेना स्तब्ध खडी हो गई। तानाजी ने कहा—"सेनापति, पहले तुम वार करो, आज मैं तुम्हे मारूगा।"

"काफिर, अभी तेरे टुकडे किए डालता हू।" उसने तलवार का भरपूर वार किया।

"अरे यवन, आज बहुत दिन की साध पूरी होगी।" बदले मे तलवार का हाथ फेकते हुए तानाजी ने कहा—"लो।"

सेनापति के मोढे पर तलवार लगी, और रक्त की धार बहने लगी। उसने तडपकर एक हाथ तानाजी की जाघ मे मारा। जाघ कट गई।

तानाजी ने गिरते-गिरते एक बर्छा सेनापति की छाती मे पार कर दिया। दोनो वीर घोडो से गिर पडे।

अब फिर सेना मे घमासान मच गया। उदयभानु की राजपूत सेना और यवन सेना परास्त हुई। सूर्योदय से पूर्व ही किले पर भगवा झण्डा फहराने लगा। तोपो की गर्जना से पहाडिया थर्रा उठी।

लाशो के ढेर से तानाजी का शरीर निकाला गया। अभी तक उसमे प्राण था। थोडे उपचार से होश मे आकर उन्होने कहा—"क्या किला फतह हो गया ?"

"हा महाराज।"

"यवन सेनापति क्या जीवित है ?"

यवन सेनापति भी जीवित था। उसका शरीर भी वही था। तानाजी ने क्षीण स्वर मे पुकारा—"यवन सेनापति !"

"काफिर ?"

पहचानते हो ?"

"दुश्मन को पहचानना क्या है ? तुम कौन हो ?"

"पन्द्रह वर्ष प्रथम जिसे आक्रान्त करके तुमने उसकी बहन का हरण किया था।"

सेनापति उत्तेजना के मारे खडा हो गया। फिर धडाम से गिर गया, उसके मुख से निकला—"तानाजी ?"

"आज बहन का बदला मिल गया।"

यवन सेनापति मर रहा था, उसका श्वास ऊर्ध्वगत हो रहा था, और आखे पथरा रही थी। उसने टूटते स्वर मे कहा—"तुम्हारी हमशीरा और बच्चे इसी किले मे है, उनकी हिफाजत · ।"

यवन सेनापति मर गया। तानाजी की दशा भी अच्छी नही थी, य शब्द मानो वह सुन नही सके। उन्होने टूटते स्वर मे कहा—"महाराज से कहना, तानाजी ने जीवन सफल कर लिया। महाराज बहिन की रक्षा करे तथा जसवतसिह का वचन पूरा करे।"

तानाजी ने अन्तिम श्वास ली।

५७

गढ आया, पर सिंह गया

शुभ मुहूर्त मे छत्रपति महाराज ने सिंहगढ मे प्रवेश किया। प्रागरण मे विषण्ण वदन सैनिक नीची गर्दन किए खडे थे। घोडे से उतरते हुए शिवाजी ने कहा—"मेरा मित्र तानाजी कहा है ?"

एक अधिकारी ने गम्भीर मुद्रा से कहा—"वह वीर वहा बरामदे मे श्रीमान् की अभ्यर्थना को बैठे है।"

अधिकारी रोता हुआ पीछे हट गया। महाराज ने पैदल आगे बढ-कर देखा।

वह निश्चल मूर्ति सैकडो घाव छाती और शरीर पर खाकर वीरासन से विराजमान थी। महाराज की आखो से टपाटप आसू गिरने लगे। उन्होने शोक-कम्पित स्वर मे कहा—"गढ आया, पर सिंह गया।"